www.thearyasamaj.org

जिसने बदली दिशा जगत् की,
धरती और आकाश की ।
जय बोलो ऋषि दयानन्द की,
जय सत्यार्थ प्रकाश की ।।

।। ओ३म् ।।

वर्ष - ५५ अंक - ११
मूल्य : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक : १००) रु०
आजीवन - १०००) रु०
प्रतिमास ता० १३ को प्रकाशित

# आर्य-संसार

कार्तिक-अग्रहन : सम्वत् २०७० वि० नवम्बर, २०१३

## आर्य समाज कलकत्ता का १२८वाँ वार्षिकोत्सव

आर्य समाज कलकत्ता, १९ विधान सरणी, कोलकाता-६ का १२८ वाँ वार्षिकोत्सव शनिवार २१ दिसम्बर से रविवार २९ दिसम्बर २०१३ पर्यन्त हृषिकेश पार्क (निकट-सिटी कॉलेज) आम्हर्स्ट स्ट्रीट, कोलकाता-९ में हर्षोल्लासपूर्वक मनाया जायगा। जिसमें प्रतिदिन प्रातः सामवेद पारायण यज्ञ, अपराह्न व सायंकाल विभिन्न सम्मेलन तथा सायंकालीन सत्र में आमिन्त्रत वैदिक विद्वानों के विभिन्न विषयों पर सारगर्भित उपदेश व भजन होंगे ।

### आमन्त्रित विद्वान्

(१) स्वामी ऋतस्पति जी परिव्राजक (२) डा० धर्मवीर जी (३) सुश्री अञ्जलि आर्या

### मुख्य कार्यक्रम :-

| | |
|---|---|
| प्रतिदिन प्रातः ७.३० बजे से ९.३० बजे तक | - **सामवेद पारायण यज्ञ** |
| प्रतिदिन प्रातः ९.३० बजे से १०.३० बजे तक | - **भजन व व्याख्यान** |
| प्रतिदिन प्रातः १०.३० बजे से १२ बजे तक | - **बंग भाषा कार्यक्रम** |
| प्रतिदिन सायं ४ बजे से ६ बजे तक | - **बंग भाषा कार्यक्रम** |
| प्रतिदिन सायं ६ बजे से ९.३० बजे तक | - **संध्या भजन व व्याख्यान** |

२१ दिसम्बर २०१३- **विशाल एवं सुसज्जित शोभा-यात्रा**- अपराह्न २ बजे से ५ बजे तक
२२ दिसम्बर २०१३—**बालक सत्संग**—अपराह्न ३ बजे से ५.३० बजे तक
२३ दिसम्बर २०१३-**स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस**--(सायं ७ बजे से ९.३० बजे तक)
२४ दिसम्बर २०१३-**राष्ट्र रक्षा सम्मेलन**–(सायं ६.३० बजे से ९-३० बजे तक)
२५ दिसम्बर २०१३-**महिला सम्मेलन**—(अपराह्न २ बजे से ५.३० बजे तक)
२६ दिसम्बर २०१३-**अभिनन्दन समारोह**—(सायंकालीन सत्र में)
२७ दिसम्बर २०१३-**वेद सम्मेलन**–(सायं ६.३० बजे से ९.३० बजे तक)
२८ दिसम्बर २०१३-**भजन व व्याख्यान**—(सायंकालीन सत्र)
२९ दिसम्बर २०१३-**सामवेद पारायण यज्ञ की पूर्णाहुति, सामूहिक सत्संग, ऋषि लंगर एवं शंका समाधान**

समस्त कार्यक्रमों में आप सादर आमन्त्रित हैं।

द्रष्टव्य : कार्यक्रम में परिवर्तन का अधिकार सुरक्षित है ।

प्रधान
**मनीराम आर्य**

मन्त्री
**सत्यप्रकाश जायसवाल**

www.thearyasamaj.org

# आर्य समाज कलकत्ता की गतिविधियाँ

## विजय दशमी पर्व

रविवार दिनांक १३/१०/२०१३ को आर्यसमाज कलकत्ता के सभागार में साप्ताहिक यज्ञ एवं सत्यार्थ प्रकाश की कथा के उपरान्त पूर्व प्रधान श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल जी की अध्यक्षता में विजयदशमी पर्व मनाया गया। इस अवसर पर उपस्थित वक्ताओं ने विजयदशमी पर्व पर अपने-अपने विचार प्रस्तुत करते हुए बताया कि इस पर्व पर प्राचीन काल में सेनाएं अस्त्र एवं शस्त्र के साथ सुसज्जित की जाती थी। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम ने आज के ही दिन लंका विजय का उपक्रम प्रारम्भ किया था। वक्तागण जिन्होंने अपने विचार व्यक्त किये वे थे—श्री देवव्रत तिवारी, श्री विवेक जायसवाल, आचार्य ब्रह्मदत्त जी एवं श्री मनीराम आर्य ।

## गुरुकुल आश्रम आमसेना में युवा चरित्र निर्माण शिविर सम्पन्न

वेद मंत्रों के उद्घोष के साथ विजयादशमी के शुभावसर पर विजयपर्व के रूप में गुरुकुल आश्रम आमसेना में ११ अक्टूबर को शिविर का शुभारम्भ माननीय विधायक नुआपाड़ा श्री राजूभाई धोलकिया के कर कमलों से उद्घाटन हुआ । प्रातःकाल ओड़ीशा, छत्तीसगढ़ के नवयुवकों/छात्रों का भीड़ गुरुकुल परिसर में अत्यन्त दर्शनीय था। इस शुभावसर पर जिला शिशु सुरक्षा अधिकारी श्रीमान् बलदेव रथ भी उपस्थित थे। पूज्यपाद् स्वामी धर्मानन्द जी ने आगंतुक नौजवानों को आशीर्वाद प्रदान करते हुए अपना उद्बोधन दिया। गुरुकुल आश्रम के तत्त्वावधान में आर्यवीर दल ओड़ीशा की ओर से लगभग २०० छात्रों को शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक उन्नति के गुर सिखाये गये । इस विजयादशमी शुभावसर पर शौर्य प्रदर्शन हेतु खरियार रोड में विशाल शोभायात्रा एवं नगर भ्रमण का कार्यक्रम अत्यन्त भव्यतापूर्वक सम्पन्न हुआ ।

दिनांक १७.१०.१३ गुरुवार को इस शिविर का समापन समारोह अत्यन्त उल्लासमय वातावरण में हुआ। इस कार्यक्रम में बाहर से आये हुये आर्यवीरों ने सात दिन में सीखे हुए अपने कला-कौशल का शानदार प्रदर्शन करते हुए अपने अनुभवों को अत्यन्त रोचकतापूर्वक प्रस्तुत किया, उन्होंने बताया कि हम शराब, मांस, मद्य आदि नशीले पदार्थों का सेवन जीवन पर्यन्त नहीं करेंगे तथा यहां से जो शिक्षा हमने प्राप्त की है उसे अपने जीवन में उतारते हुए अपने अन्य साथियों को भी यहाँ आने के लिए प्रेरित करेंगे । अनेक नवयुवकों ने यह भी संकल्प लिया कि हम ऋषि दयानन्द के द्वारा बताये गये मार्ग का अनुसरण करते हुए अपने परिवार को भी इस मार्ग में चलने के लिए प्रेरित करेंगे ।

इस शिविर के समस्त कार्यक्रमों का संचालन उत्कल प्रान्तीय आर्यवीर दल के संचालक श्री डॉ. कुञ्जदेव जी मनीषी ने किया।

प्रेषक : आचार्य रणजीत 'विवित्सु' मुख्याध्यापक, गुरुकुल आमसेना

## सादर निवेदन

आर्य संसार के विगत दो तीन अंकों में हम श्री हरिश्चन्द्र वर्मा एवं श्री आदित्यमुनि वानप्रस्थ जी के प्रत्रोत्तर को प्रकाशित करते रहे हैं । अब इन पत्रों के प्रकाशन को हम बन्द कर रहे हैं । अतः दोनों विद्वान् महानुभावों से निवेदन है कि इस सम्बन्ध में 'आर्य संसार' और पत्रोत्तर न प्रेषित कर ।

—सम्पादक

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

# आर्य-संसार

वर्ष ५५ अंक — ११

कार्तिक-मार्गशीर्ष २०७० वि०

दयानन्दाब्द १८९

सृष्टि सं० १,९६,०८,५३,११४

नवम्बर— २०१३

मूल्य : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक : १०० रुपये
आजीवन : १००० रुपये

*सम्पादक :*
**प्रो० उमाकान्त उपाध्याय,**
एम. ए.

***सह सम्पादक :***
**श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल**
*सहयोगी संपादक :*
**श्रीमती सरोजिनी शुक्ला**
**श्री सत्य प्रकाश जायसवाल**
**पं० योगेश राज उपाध्याय**

## इस अंक की प्रस्तुति

| | | |
|---|---|---|
| १. आर्य समाज की गतिविधियाँ | | २ |
| २. इस अंक की प्रस्तुति | | ३ |
| ३. सफलता का आधार सजगता | | ४ |
| ४. महर्षि वचन सुधा-२३ | -प्रो० उमाकान्त उपाध्याय | ७ |
| ५. वेद एवम् ऋषि ग्रन्थों में समग्र उन्नति का सन्देश | -प्रो० उमाकान्त उपाध्याय | ९ |
| ६. शारदा देश कश्मीर: जो कभी संस्कृत विद्या का केन्द्र था विषयक साहित्य | -डॉ० भवानीलाल भारतीय | १२ |
| ७. वैदिक ज्ञान से जीवन आनन्दमय | -मृदुला अग्रवाल | १४ |
| ८. 'ऋतोपासना ही देवतत्व प्राप्ति का एकमात्र सोपान है | -प्रो० ओम कुमार आर्य | १८ |
| ९. 'क्यों खण्ड खण्ड उत्तराखण्ड?' | -देवनारायण भारद्वाज | २१ |
| १०. 'महर्षि का कलकत्ता' शुभआगमन | -श्री खुशहाल चन्द्र आर्य | २५ |

**आर्य समाज कलकत्ता**

***१९, विधान सरणी, कोलकाता-७०० ००६, दूरभाष : २२४१-३४३९***

***email : aryasamajkolkata@gmail.com***

'आर्य संसार' में प्रकाशित लेखों का उत्तरदायित्व सम्बन्धित लेखकों पर है।
किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र कोलकाता ही होगा।

www.thearyasamaj.org

## ११

# सफलता का आधार सजगता

**यो जागार तमृचः कामयन्ते, यो जागार तम् सामानि यन्ति।**
**यो जागार तमयं सोम आह, तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः।।**

ऋग्वेद ५-४४-१४

**शब्दार्थ :–**

| | | | |
|---|---|---|---|
| यः | = जो मनुष्य, साधक | अयम् | = यह |
| जागार | = जागता, सावधान रहता है | सोम | = सोम प्रभु, परमेश्वर |
| तम् | = उस मनुष्य को | आह | = कहते हैं, आश्वासन देते हैं |
| ऋचः | = ऋचाएं, ज्ञान, स्तुतियां | तव | = तुम्हारे |
| कामयन्ते | = कामना करती हैं | अहम् | = मैं (सोम) |
| तम्+उ | = उसको ही | अस्मि | = हूं |
| सामानि | = शान्ति, भक्ति | सख्ये | = सख्य, मित्रता में |
| यन्ति | = प्राप्त होती हैं | न्योकाः | = निरन्तर निवासी |
| तम् | = उसको | | |

---

**भावार्थ :–ऋचाएं, ज्ञान, स्तुतियां भी सजग सावधान मनुष्य की कामना करती हैं। सोम प्रभु मनुष्य को आश्वासन देते हैं कि मैं (सोम प्रभु) सदा सजग मनुष्य की मित्रता में निवास करता हूँ।**

**व्याख्यान बिन्दु :**

१. **सजगता, पुरुषार्थवाद, भाग्यवाद का संबंध।**
२. **ज्ञान, विद्या, शान्ति, भक्ति की कामना का आशय।**
३. **प्रभु की मित्रता, प्रभु की शरण और शान्ति का संबंध।**

### व्याख्या

जागना सावधानी सक्रियता का प्रतीक है

प्रस्तुत मंत्र में [illegible]ता की महिमा का वर्णन है।

इस मंत्र में मनुष्य को एक आश्वासन दिया गया है। मनुष्य प्रायः सजग, सावधान नहीं रहता। मंत्र में यह कहा गया है कि जो सावधान रहता है, सजग रहता है, उसे (ऋचा) ज्ञान भी मिलता है और प्रभु की भक्ति भी मिलती है। सजग सावधान रहने के लिए मनुष्य को अपने पुरुषार्थ, परिश्रम पर भरोसा रखना चाहिए। भाग्य पर रोना, यह आलसी, कापुरुष का काम है। तपस्वी व्यक्ति परिश्रम पर,

www.thearyasamaj.org

सावधानी पर भरोसा करते हैं। हिन्दी की एक प्रसिद्ध पंक्ति है -

**'फूल कांटो में खिला था , सेज पर मुरझा गया।'**

फूल जब अपनी जड़ के साथ जुड़ा था तो शीत, ताप, वर्षा, हवा, सबको सह रहा था। और जब किसी सेज पर, शय्या पर आया तो विलासी बन गया। तपस्या छूट गई और मुरझा गया। अतः सफलता का प्रथम सूत्र है - सजग रहकर तपस्या करते रहना। सफलता, सजगता का प्रथम सूत्र है - ब्रह्म मुहूर्त में उठ जाना और अपने दिन को सुदिन बनाने का उपाय करना। इसी का साथी सजगता पुरुषार्थ है। सफलता का शत्रु है 'भाग्यवाद पर भरोसा करके पुरुषार्थ न करना' -

**कायर मन के एक अधारा , दैव दैव आलसी पुकारा।**

जो पुरुषार्थी होते हैं वे अपने भाग्य पर नहीं अपने परिश्रम पर, पुरुषार्थ पर भरोसा करते हैं। परिश्रमी को ज्ञान मिलता है। जो आलस्य में सोता रहता है उसे न ज्ञान मिलता है, न भक्ति मिलती है। सजग रहने से ही मनुष्य को शान्ति भी मिलती है। जो प्रमादी होगा उसे शान्ति भी नहीं मिलती है। शान्ति का अर्थ मरघट की शान्ति या निर्जन की शान्ति नहीं है। शान्ति धारणा और ध्यान से मिलती है। आजकल (Meditation) की बड़ी चर्चा है। लेकिन यह ध्यान (Meditation) तीसरे नम्बर पर है। पहला है - प्रत्याहार (Attention) दूसरा है धारणा (Concentration) फिर तीसरा है ध्यान (Meditation) अतः Attention, Concentration फिर Meditation प्रत्याहार, धारणा और ध्यान। इन तीनों का सुफल है - प्रभु-भक्ति और शान्ति।

इस मन्त्र में सजगता, सावधानता की महिमा पर विशेष जोर दिया गया है। जो सावधान रहता है उसे ही ऋचाएँ अर्थात् ज्ञान मिलता है। जो सावधान रहता है उसे ही प्रभु भक्ति का वरदान मिलता है।

सावधानता अथवा सजगता के अनेक क्षेत्र हैं, जितने कार्य उतने प्रकार की सजगता। हम यहाँ सजगता के दो क्षेत्रों की चर्चा कर रहें हैं। एक तो संसारी कामों में सजगता। दूसरे आध्यात्मिक साधना में—प्रभु भक्ति में सजगता। प्रायः ईमानदार, सत्यनिष्ठ, सदाचारी, सद्विचारी लोग भी अपने सांसारिक कार्यों में ही सजग रहते हैं। व्यवसाय हो, या कृषि, उद्योग हो या कोई और पेशा, सबमें सजगता की आवश्यकता रहती है। किन्तु आध्यात्मिक सजगता को छोड़ नहीं देना चाहिए। अपने आत्मा के प्रति भी सावधान रहना चाहिए। हम कह रहे थे प्रत्याहार (Attention) धारणा (concentration) ध्यान (Meditation) अपने संसार को चलाते हुए भी करते रहना चाहिए। प्रातः सायं घण्टा आधा घण्टा, कम से कम, चालीस पैंतालिस मिनट इस आध्यात्मिक साधना में लगाना चाहिए। वैसे तो सामान्य मनुष्य अध्यात्म से पृथक सा रहता है। और साधक यति, मुनि सांसारिक कार्यों से विरत रहते हैं। भगवद्गीता में श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं-

**या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।**
**यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ।।** गीता २।६९

अर्थात् जिन कार्यों के प्रति सामान्य मनुष्य सोया रहता है, असावधान रहता है, उन कार्यों के प्रति

www.thearyasamaj.org

साधक, मुनि सजग रहते हैं। और जिन कार्यों के प्रति सामान्य मनुष्य सजग सावधान रहते हैं उन कार्यों में साधक मुनियों की कोई रुचि नहीं रहती। वे उधर से सोये रहते हैं। किन्तु हम सब इस मन्त्र से यह सन्देश पाते हैं कि हमें **ज्ञान, कर्म और उपासना** तीनों के प्रति सजग रहना चाहिए, जाग्रत रहना चाहिए। सामान्य गृहस्थ को ज्ञान पर्याप्त मिलना चाहिए। ज्ञान की प्राप्ति में ही कर्म निहित रहता है। वस्तुतः कर्म ज्ञान में ही समाया रहता है। बिना ज्ञान के कर्म होता नहीं, इसलिए श्री कृष्ण गीता में कहते हैं—

''**सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते।**'' गीता ४।३३

अर्थात् सभी कार्य ज्ञान में ही समाये रहते हैं।

मन्त्र का संदेश है कि मनुष्य को ज्ञान, कर्म, उपासना तीनों के प्रति सजग रहना चाहिए। गृहस्थ अपने दैनिक गृहस्थी के कार्यों को करता हुआ भी योग के यम, नियम, आसन, प्राणायाम आदि बहिरंग योग को करता हुआ प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि अन्तरंग योग का अभ्यास भी सजगता पूर्वक अवश्य करता रहे। इसीलिए स्वामी दयानन्द जी ने लिखा है कि गृहस्थ आश्रम मोक्ष तक की साधना का आश्रम है। इसीलिए मन्त्र में जहाँ ऋचाओं की, ज्ञान की बात की गई है, वहीं प्रभुभक्ति पर भी पूरा ही बल दिया गया है . जब ये दोनों दिशाएं सावधानी से संभाल ली जाती हैं तो परमेश्वर की मित्रता, कृपा निरन्तर बनी रहती है।

मंत्र में यह कहा गया है कि जो व्यक्ति सजग रहता है, तप करता है उसे सोम प्रभु का आश्वासन है कि 'मैं सदा तुम्हारा मित्र बना रहता हूं।' भगवान कहते हैं कि मैं तुम्हारा हूं - 'तव अहम् अस्मि।' भगवान हमारे हो जाते हैं। लेकिन कब ? जब हम सावधान होकर उनके हो जाते हैं। हम कैसे किसी के हो जाते हैं ? कहते हैं - वह तो अपने परिवार का हो गया है। कोई-कोई अपने व्यवसाय के हो जाते हैं, रातों-दिन सोते-जागते उनके मन में व्यवसाय का काम ही भरा रहता है। कोई-कोई अपनी पार्टी पोस्ट के हो जाते हैं। वे रातों-दिन अपनी पार्टी या पोस्ट की बात,उसी का हित सोचते रहते हैं। जो किसी का हो जाता है वह और चीजों को भूल जाता है। व्यवसायी का मन रातों-दिन अपने व्यवसाय में रहता है। पार्टी का काम करने वाले रातों-दिन अपनी पार्टी की ही सोचते हैं। जब भक्त भगवान के समर्पित हो जाता है, वह भगवान का हो जाता है। वह रातों-दिन भगवान को ही सोचता रहता है। जो रातों-दिन भगवान को सोचता रहता है, उसे भगवान की मित्रता मिल जाती है। समर्पण से प्रभु की भक्ति रोम-रोम में समा जाती है। और भगवान भक्त के समर्पण में निवास करने लगते हैं। उसे शान्ति आनन्द प्राप्त होता है।

जिसे प्रभु भक्ति का आनन्द मिलने लगता है वह सांसारिक आनन्द को तुच्छ समझता है—

**''प्रभु को बिसार किसकी आराधना करूँ मैं,**
**पा कल्पतरु किसी से क्या याचना करूँ मैं।**
**मोती जो मिल रहा है मानस के मन्दिरों में,**
**काँकर बटोरने की क्या कामना करूँ मैं।।''**

**साभार: वेद -वीथिका**

www.thearyasamaj.org

# ''महर्षि वचनसुधा'' – २३

–प्रो० उमाकान्त उपाध्याय

**विद्यां चाऽविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह ।**

**अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते ।** —यजु० अ० ४०। मं० १४ ॥

*जो मनुष्य विद्या और अविद्या के स्वरूप को साथ ही साथ जानता है, वह 'अविद्या' अर्थात् कर्मोपासना से मृत्यु को तरके 'विद्या' अर्थात् यथार्थ ज्ञान से मोक्ष को प्राप्त होता है ।*

—सत्यार्थ० नवम समु०

विद्या और अविद्या शास्त्रीय परिभाषा के शब्द हैं। यों तो विद्या का अर्थ होता है जानकारी, ज्ञान, 'वेत्तियया सा विद्या' जिससे जाना जाये वह विद्या हैं । विद्या शास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्यात्म विद्या को कहते है । अध्यात्म विद्या में आत्मा और परमात्मा से सम्बन्धित चर्चा होती है ।

उपनिषद् में पराविद्या और अपराविद्या का वर्णन आता है । पराविद्या श्रेष्ठ है, परब्रह्म परमेश्वर से सम्बन्धित है और अपराविद्या सांसारिक व्यवहार से सम्बंधित है । यहां विद्या परमात्मा से सम्बन्धित हैं ।

अविद्या में नञ् समास = यह समास दो तरह का होता है– (१) उपस्थित का निषेध और दूसरा उससे भिन्न किन्तु उसी के सदृश है । जैसे किसी ने कहा अगौ इसका एक अर्थ हुआ गाय नही । अर्थात् गाय का सीधा सा निषेध है और दूसरा अर्थ हुआ गाय नहीं किन्तु गाय के सदृश जैसे नील गाय—गवय ।

अविद्या का भी दो अर्थ होता है एक विद्या से भिन्न—विद्या का निषेध अर्थात् अज्ञान, न जानकारी आदि ।

अविद्या का दूसरा अर्थ हुआ विद्या से भिन्न किन्तु विद्या से सदृश—कर्म और उपासना ।

इस मंत्र में यही दूसरा अर्थ है अविद्या अर्थात् विद्या से भिन्न किन्तु विद्या के सदृश ।

संसार में जीवात्मा के क्रिया-कलाप के लिये ज्ञान, कर्म और उपासना तीनों को बताया जाता है। ज्ञान, कर्म, और उपासना तीनों जीवात्मा के कल्याणमय जीवन यापन के लिए आवश्यक हैं । ज्ञान तो हुआ विद्या । ज्ञान और विद्या दोनों पर्यायवाची हैं । जिससे जाना जाये वही विद्या है वेत्ति यया सा विद्या। ज्ञायते येन तद् ज्ञानम् जिसे जाना जाये वो ज्ञान है । इस प्रकार ज्ञान और विद्या दोनों एक ही है ।

अब रही अविद्या की बात । विद्या अर्थात् ज्ञान से भिन्न किन्तु ज्ञान के सदृश । ज्ञान, कर्म और उपासना में ज्ञान के सदृश किन्तु ज्ञान से भिन्न कर्म और उपासना है । कर्म और उपासना जीवात्मा के भोग के लिये, जीवन जीने के लिये, आध्यात्मिक उन्नति के लिये आवश्यक है । अतः मन्त्र के अन्त में स्वामी जी ने अविद्या का अर्थ कर्म और उपासना लिखा है ।

अविद्या का अर्थ जब विद्या तथा विद्या के सदृश का निषेध है तो उसके लिये स्वामी जी ने नवम

www.thearyasamaj.org

समुल्लास में इसी प्रसंग में लिखा है ।

**''अनित्याशुचिदुःखानात्मसु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिर विद्या ।।''** —यह योगसूत्र का वचन है ॥ जो 'अनित्य' संसार और देहादि में नित्य—अर्थात् जो कार्य जगत् दीखता-सुना जाता है, सदा रहेगा, सदा से है और योगबल से यही देवों का शरीर सदा रहता—वैसे विपरीत बुद्धि होना अविद्या का प्रथम भाग है । अशुचि अर्थात् मलमय स्त्र्यादि के और मिथ्याभाषण, चोरी आदि अपवित्र में पवित्र बुद्धि दूसरा, अत्यन्त विषय सेवन रूप 'दुःख' में सुखबुद्धि आदि तीसरा । 'अनात्मा' में आत्मबुद्धि करना अविद्या का चौथा भाग है । इस चार प्रकार के विपरीत ज्ञान को 'अविद्या' कहते हैं । इससे विपरीत अर्थात् अनित्य में अनित्य और नित्य में नित्य, अपवित्र में अपवित्र और पवित्र में पवित्र और दुःख में दुःख, सुख में सुख, अनात्मा में अनात्मा और आत्मा में आत्मा का ज्ञान होना 'विद्या' है । अर्थात् **वेत्ति यथावत् तत्त्वं पदार्थस्वरूपं यया सा विद्या, यथा तत्त्वस्वरूपं न जानाति भ्रमादन्यस्मिन्नन्यन्निश्चिनोति साऽविद्या**' जिससे पदार्थों का यथार्थ स्वरूप बोध होवे वह 'विद्या' और जिससे तत्त्वस्वरूप न जान पड़े, अन्य में अन्य बुद्धि होवे, वह 'अविद्या' कहाती है । अर्थात् कर्म और उपासना 'अविद्या' इसलिये है कि यह बाह्य और अन्तर क्रिया विशेष नाम है, ज्ञान विशेष नहीं । इसी से मन्त्र में कहा है कि बिना शुद्ध कर्म और परमेश्वर की उपासना के मृत्यु दुःख से पार कोई नहीं होता। अर्थात् पवित्र कर्म, पवित्रोपासना और पवित्र ज्ञान ही से मुक्ति और अपवित्र मिथ्याभाषणादि कर्म, पाषाणमूर्त्यादि की उपासना और मिथ्याज्ञान से बन्ध होता है । कोई भी मनुष्य क्षणमात्र भी कर्म, उपासना और ज्ञान से रहित नहीं होता । इसलिये धर्मयुक्त सत्यभाषणादि कर्म करना और मिथ्याभाषणादि अधर्म को छोड़ देना मुक्ति का साधन है ।

**ईशावास्यम्**
पी-३०, कालिन्दी
कोलकाता-७०००८९

फोन (०३३) २५२२२६३६
चलभाष : ०९४३२३०१६०२

**प्रो० उमाकान्त उपाध्याय की नूतन पुस्तकें प्रकाशित :**

**१. प्रभात वन्दन, मूल्य : २५) रु०**
**प्रातःकाल के प्रार्थना मन्त्रों की व्याख्या**

**२. प्रेरक संस्मरण, मूल्य : ५०) रु०.**
**प्रचार के प्रेरणाप्रद २० संस्मरणों का वर्णन**

**३. श्राद्ध तर्पण, मूल्य : ५) रु०**

www.thearyasamaj.org

# वेद एवम् ऋषि ग्रन्थों में समग्र उन्नति का सन्देश

**–प्रो० उमाकान्त उपाध्याय**

यह सर्वसम्मत ऐतिहासिक सत्य है कि भारतवर्ष की पुण्यभूमि पर जब से आर्य (हिन्दू) आकर बसे, तब से लेकर महाभारत के हजार-दो हजार साल पहले तक भारतवर्ष संसार का सर्वश्रेष्ठ सब प्रकार से उन्नत समृद्ध देश था। यह भी प्रकृति का दैवी विधान है कि जब आश्यकता से बहुत अधिक समृद्धि, सुख-सुविधा हो जाती है तो सर्वसाधारण के जीवन में विलास, आरामतलबी, सदाचार का पतन आने लग जाता है, समृद्धि के चरम उत्कर्ष पर, तप और सदाचार के अभाव में, दुराचार, विलास बढ़ जाने से सुरा, सुन्दरी, पारस्परिक कलह, व्यक्ति और राष्ट्र का अधःपतन होने लगता है। यह महाभारत काल में बहुत सुस्पष्ट दिखाई पड़ता है जब धर्मराज भी पक्का जुआड़ी, धृतराष्ट्र जैसा राजा आँखों का अंधा तो था ही, हृदय और बुद्धि से भी अति मलिन हो गया था, भीष्म पितामह और आचार्य द्रोण जैसे प्रतिष्ठित वृद्ध भी कुलवधू द्रौपदी के निष्ठुर अपमान को सह गये थे, और तो और उस युग के सर्वश्रेष्ठ पुरुष, वेद, वेदांग तत्वज्ञ श्रीकृष्ण अपने कुल को सर्वनाशी मदिरा-पान और अन्तःकलह से नहीं बचा पाये थे और सारे यादव अपने में ही मर मिट गये थे।

महाभारत के पश्चात् यज्ञों में पाखण्ड और पशु-हिंसा, सुरापान, बौद्धों का वज्रयान, चारित्रिक पतन, ये सभी देश के अधःपतन में सहयोगी बने, इसी के साथ तांत्रिकों का पंचमकार भी बहुमुखी पतन में सहयोगी बने, बौद्धों के अहिंसावादी उत्कर्ष में परमेश्वर को असत्य बताकर इस संसार की महिमा को प्रतिष्ठित किया, बौद्धों के कथन कि 'संसार सत्य है और ब्रह्म मिथ्या है' के उत्तर में आदि शंकराचार्य ने 'ब्रह्म सत्यम् जगन्मिथ्या' का सिद्धान्त निरूपित किया। बौद्धों ने ब्रह्म को मिथ्या कहा तो उत्तर में शंकराचार्य ने संसार को, जगत को मिथ्या कहा। 'ब्रह्म सत्यम् जगन्मिथ्या' के सिद्धान्त का हमारे व्यक्ति, समाज और राष्ट्र पर बड़ा अनिष्टकारी प्रभाव पड़ा। जो समाज के श्रेष्ठ लोग थे, विद्वान् सदाचारी नेता होने के योग्य थे, वे जगत को मिथ्या मानकर सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन से अलग-थलग हो गये और देश राष्ट्र सब प्रकार से पतन की ओर बढ़ चला। शूद्रों का अपमान, उनसे घृणा, नारियों का तिरस्कार आरम्भ हो गया, समाज में ऊँच-नीच का भाव पैदा हो गया। साठ वर्ष के बूढ़े राणा, राजाओं के लिए सोलह साल की कन्याओं के डोले लड़कर भेजे जाने लगे, मुट्ठी भर हूण, पठान, मुगल आदि कच्चा मांस खाने वाले और चमड़ा पहनने वाले लुटेरों ने देश को तबाह कर दिया। महाराणा सांगा और सोमनाथ जैसे सैकड़ों, हजारों काण्ड देश में होने लगे। इस समग्र सर्वतोन्मुखी पतन का एकमात्र कारण यह था कि भारतवर्ष के जनजीवन से वेदों और ऋषियों के संदेश भुला दिये गये और उनकी जगह पर शंकराचार्य का जगन्मिथ्या, बौद्धों की वज्रयानी चरित्रहीनता और अहिंसा, तांत्रिकों का पंचमकार सेवन आदि देश में प्रचलित हो गये। ध्यान देने की बात है कि वेद और ऋषियों के दर्शन संसार को सर्वतोमुखी समग्र उत्थान का सन्देश देते हैं।

www.thearyasamaj.org

भारतवर्ष की प्राचीन संस्कृति में 'धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष' को परम पुरुषार्थ कहा गया है, यहाँ धर्म के साथ अर्थ और काम को आवश्यक माना गया है। दर्शन के ऋषि कहते हैं **'यतोऽभ्युदय निःश्रेयससिद्धिः स धर्मः'**, यहाँ सांसाराकि उन्नति और मोक्ष, दोनों को धर्म का अंग बताया गया है। दर्शन शास्त्र कहते हैं **'भोगापवर्गार्थं दृश्यम्'**—यह संसार भोगों को भोगने और मोक्ष की सिद्धि के लिए बनाया गया है, गोस्वामी तुलसीदास ने भी कहा है—'साधन धाम मोक्ष कर द्वारा', महर्षि व्यास के वेदांत दर्शन के प्रथम चार सूत्रों को देखने से सिद्ध होता है कि यह संसार वास्तविक है और स्वामी शंकराचार्य की उक्ति 'जगन्मिथ्या' उनकी अपनी उहा, सूझ-बूझ, शायद बौद्धों को पराजित करने के लिए है। वेदांत दर्शन का सूत्र है—(१) **'अथाऽतो ब्रह्म जिज्ञासा'**-अब ब्रह्म की जिज्ञासा करते हैं, (२) **'जन्माद्यस्ययतः'**-क्योंकि उसी ब्रह्म ने इस संसार की सृष्टि, पालन और प्रलय की व्यवस्था की है, (३) **'शास्त्र योनित्वात्'**-उसी ब्रह्म ने वेदों का ज्ञान दिया है, (४) **'तत्तु समन्वयात्'**-जैसा वेदों में वर्णन है वैसा ही इस संसार में पाया जाता है, अर्थात् वेदों के ज्ञान और संसार की व्यवस्था में समन्वय है। कहा जाता है कि यह संसार परमेश्वर का दृश्य-काव्य है और वेद परमेश्वर का श्रव्य-काव्य है, दोनों ही परमेश्वरकृत हैं, दोनों में समन्वय है। उदाहरण के लिए सोनी, की टी०वी० और उसी का मैनुअल (बुकलेट) में समन्वय होता है, किसी और कम्पनी की टी०वी० और किसी और कंपनी के बुकलेट में समन्वय नहीं होगा। जब वेद के ज्ञान और संसार की व्यवस्था में समन्वय है तो पता चलता है कि जिसने वेद-ज्ञान दिया है उसी ने संसार का निर्माण किया है अर्थात् जगत को परमेश्वर ने बनाया है और परमेश्वर की कृति मिथ्या नहीं हो सकती, अतः सिद्ध होता है । कि 'जगन्मिथ्या' का सिद्धान्त सत्य नहीं है।

भारतीय संस्कृति के सर्वश्रेष्ठ और सर्वमान्य ग्रंथ वेद हैं, चारों वेदों में बीस हजार से भी अधिक मन्त्र हैं, इनमें हजारों मंत्रों में जीवन के उत्थान, सांसारिक उन्नति, अर्थ की सम्पन्नता आदि का बहुत सीधा और सुस्पष्ट उपदेश दिया गया है-उदाहरण के लिए कुछ मन्त्र और उनके सरल से अर्थ यहां उद्धृत किये जा रहे हैं—

(१) **'स्तुता मया वंरदा वेदमाता...आयुः प्राणं प्रजा पशुं कीर्तिम् द्रविणं ब्रह्मर्चसं, मह्यम् दत्वा व्रजत ब्रह्मलोकं'**-अथर्व/१९।७१।१, अर्थात् हमने वर देने वाली वेदमाता की स्तुति की, उसका अध्ययन किया और उस पर आचरण किया, इससे वेद-ज्ञान ने हमको आयु, प्राण, प्रजा, पशु, कीर्ति, धन, बल, सब कुछ दिया और हमकों ब्रह्मलोक अर्थात् मोक्ष तक पहुंचाया।

(२) **'इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मै, पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वद्मानम् वाचः सुदिनत्वमह्नाम्'**-ऋग् /२।२१।६, अर्थात् है,. ऐश्वर्य देनेवाले परमेश्वर हमें श्रेष्ठ धन, संपति, दीजिए, हमें ज्ञान और दक्षता प्रदान कीजिए जो हमारे जीवन का पोषण करें, हमकों मधुर प्रभावशाली वाणी दीजिए और हमारे जीवन में सदा सब दिन सुदिन सुन्दर बने रहें।

(३) **'उद्यानं ते पुरुष नावयानं, जीवातुम् ते दक्षतातिं कृणोमि'**-अथर्व ?८।१।६, अर्थात् परमेश्वर मनुष्य को आश्वासन उपदेश देते हैं कि हे मनुष्यों! हमने तुमको मनुष्य जीवन इसलिए दिया है कि तुम सदा अपने जीवन में, अपने समाज में उन्नति करते रहो, ऊपर उठाते रहो और कभी अवनति न करो, तुम और तुम्हारा समाज कभी पतन की ओर न जाये, तुम्हारे जीवन में सदा दक्षता, सबलता बनी रहे.

www.thearyasamaj.org

इसका भाव यह है कि परमेश्वर ने हमें हमारे जीवन को उन्नति और दक्षता का वरदान दिया है।

(४) **'प्रजापते.......यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्'**-ऋग्/ १०।१२१।१०, अर्थात् हे सब प्रजाओं के पालन करने वाले परमेश्वर, हम जिस जिस पदार्थ की कामनावाले होकर आपका आश्रय लेवें, आपसे प्रार्थना करें, वह वह हमारी सभी इच्छाएं पूर्ण होवें और आपकी कृपा से सब प्रकार के धन और ऐश्वर्यों के स्वामी होवें।

इस छोटे से लेख में हम यह प्रयास कर रहे हैं कि मानव सभ्यता के श्रेष्ठ ग्रंथ वेदों में और ऋषियों के उपदेशों में हमें यह बताया गया है कि हमारा जीवन, हमारा समाज, यह संसार, सांसारिक और पारमार्थिक उन्नति के लिए परमेश्वर ने बनाया है तथा यह जगत मिथ्या नहीं है। हमारा देश और हमारा समाज जब तक इस आदर्श पर चलता रहा, हम संसार के सर्वाधिक सुखी, सम्पन्न राष्ट्र बने हुए थे। इन उपदेशों को भुलाकर, संसार की उपेक्षा करके हम निर्बल हो गये।

**ईशावास्यम्**
फोन (०३३) २५२२२६३६ — पी-३०, कालिन्दी
चलभाष : ०९४३२३०१६०२ — कोलकाता-७०००८९

---

# आर्य युवा-शाखा द्वारा स्वैच्छिक रक्तदान शिविर का आयोजन

अमर हुतात्मा सरदार भगत सिंह के १०९ वीं जन्मोत्सु सकतत्ता (युवा-शाखा) द्वारा रविवार दिनांक २९ सितम्बर २०१३ को आर्य समाज के सभागार में किया गया। इस शिविर का उद्घाटन दीप प्रज्जवलित कर कोलकाता नगर, जोड़ासाकू की विधायक श्रीमती स्मिता बक्सी ने किया। उन्होंने रक्तदान के युवाओं महत्ता एवं आवश्यकता के बारे में सारगर्भित भाषण दिया।

आर्य समाज कलकत्ता के प्रधान श्री मनीराम आर्य जी ने शहीदें आजम भगत सिंह के बलिदान के बारे में विस्तार से बताया तथा आज के युवाओं को प्रेरित किया। अन्य वक्तागण जिन्होंने रक्तदान की महत्ता पर प्रकाश डाला वे थे भूतपूर्व प्रधान श्री श्रीराम आर्य एवं श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल, मंत्री श्री सत्यप्रकाश जायसवाल, श्री अरविन्द सेठ, श्री संज्जय अग्रहरि, श्री विवेक जायसवाल तथा पं० देवनारायण तिवारी। कार्यक्रम का संचालन श्री रणजीत झा ने किया। विशिष्ट अतिथि के रूप में अमहस्ट्र स्ट्रीट थाना के एडिशनल ओ०सी उपस्थित थे।

युवा-शाखा के अध्यक्ष श्री विवेक जायसवाल,शिविर सचिव श्री सुदेश कुमार जायसवाल एवं शिविर प्रभारी श्री विनीत जायसवाल के साथ श्री आनन्द कुमार गुप्त, श्री कृष्ण कुमार जायसवाल, श्री पवन सेठ, श्री संजय अग्रहरि, श्री गौरव लाल साव सहित सभी युवाओं ने कार्यक्रम को सफल बनाने में सक्रिय भूमिका निभाई। इस शिविर में ७० रक्तदाताओं ने रक्तदान दिया।

भवदीय

**–विवेक जायसवाल**

अध्यक्ष (युवा -शाखा)

www.thearyasamaj.org

# शारदा देश कश्मीर : जो कभी संस्कृत विद्या का केन्द्र था

–डा० भवानीलाल भारतीय

आज जम्मू और कश्मीर राज्य की राजभाषा उर्दू है तथा यहाँ संस्कृत की बात तो दूर रही, हिन्दी के विकास के लिए भी बहुत अनुकूल वातावरण नहीं है। इसे देखते इस बात पर कौन विश्वास करेगा कि किसी समय यही कश्मीर प्रदेश संस्कृत विद्या का केन्द्र रहा था। इस देश में उत्पन्न संस्कृत कवियों ने उच्च कोटि के काव्य की रचना की। यहां के आचार्यों ने साहित्य की आत्मा के विवेचन के दौरान अलंकार रीति वक्रोक्ति तथा ध्वनि जैसे सम्प्रदायों को जन्म दिया। प्रत्यभिज्ञा शैव दर्शन का जन्म यहीं हुआ तथा राजतरंगिणी जैसे विख्यात इतिहास ग्रंथ यहीं पर लिखे गये। यहां के संस्कृत रचनाकारों के नामों की विशिष्टता हमारा ध्यान सहजतया आकृष्ट करती है। एक ओर कल्हण, बिल्हण, जल्हण, शिल्हण जैसे नाम हैं जो 'ण' पर समाप्त होते हैं तो दूसरी ओर कैयट, रुद्रट, मम्मट, उद्भट् जैसे 'ट' पर समाप्त होने वाले नाम हैं। इन नामों को देखते ही हम समझ जाते हैं कि यह रचनाकार कश्मीर की धरती का वासी है। पहले कवियों की चर्चा करें-गौड़ अभिनन्दन ने लघु योग वासिष्ठ की रचना की। कुछ कम पांच हजार श्लोकों में लिखा गया यह काव्य दार्शनिक ग्रंथ योग वासिष्ठ का पद्यात्मक रूप है।। नवसाहसांक चरित काव्य के रचयिता पद्मगुप्त ने इस काव्य में साहसांक विरुद् वाले अपने आश्रयदाता राजा के चरित का वर्णन किया है। कश्मीर नरेश जयादित्य के प्रधान अमात्य दामोदर गुप्त ने कुट्टनीमत काव्य लिखा जो वारांगनाओं के जीवन के नाना प्रकोष्ठों से परदा हटाता है। किसी समय कश्मीर के राजा रहे मातृगुप्त कभी काव्य रचना करते थे। भर्तृमेष्ठ एक अन्य कश्मीरी कवि था जिसकी रचना हय्यग्रीव वध पौराणिक कथानक पर आधारित है। इस काव्य में प्रयुक्त वक्रोक्तियों की प्रशंसा आचार्य राजशेखर ने अपने ग्रंथ काव्य मीमांसा में की है। आचार्य क्षेमेन्द्र ने जहाँ साहित्यालोचन में औचित्य सिद्धान्त का निरूपण अपने ग्रंथ 'औचित्य विचार चर्चा' के द्वारा किया वहां रामायण मंजरी, भारत मंजरी, वृहत्कथा मंजरी जैसे काव्यों के माध्यम से पुरातन ग्रंथों को काव्य का रूप दिया। काव्य लेखन के अतिरिक्त उनके उपदेशात्मक ग्रंथ यथा कविकण्ठाभरण, सुवृत्त तिलक तथा औचित्य विचार चर्चा अलंकार शास्त्र (साहित्य शास्त्र) से संबंधित ग्रंथ है। कवि का श्रीकण्ठ चरित पौराणिक कथानक पर आधारित है जिसमें भगवान शिव तथा त्रिपुरासुर के युद्ध का वर्णन है।

'विक्रमांक देव चरित' जैसे ऐतिहासिक काव्य का लेखक विल्हण कश्मीर को 'शारदा देश' कहता है क्योंकि यहां विद्या की देवी सरस्वती ने अपने लीला विलास से रसिक समाज को मोहित किया था। साहित्य शास्त्र में विभिन्न सम्प्रदायों के प्रवर्तकों तथा विभिन्न काव्यांगों के विवेचन में तत्पर आचार्यों की चर्चा करें तो कश्मीर को ऐसे आचार्य कोटि के विद्वानों को उत्पन्न करने का श्रेय देना होगा। अलंकार सम्प्रदाय के आचार्य भामह (काव्यालंकार के रचयिता) रीतिरात्मा काव्यस्य की उद्घोष कर वैदर्भा, गौड़ी तथा पाञ्चाली संज्ञक रीतियां को काव्य की मूल आत्मा ठहराने वाले आचार्य वामन, अलंकारों के मूल

www.thearyasamaj.org

में वास्तव्य औपम्य, अतिशय तथा श्लेष नामक तत्वों की सत्ता बताने वाले आचार्य रुद्रट, ध्वन्यालोक ग्रंथ के लेखक तथा काव्य की आत्मा ध्वनि बताने वाले आचार्य आनन्दवर्द्धन, व्यक्ति विवेक के लेखक महिमभट्ट, अलंकार सर्वस्व के प्रणेता रूप्यक, तथा ध्वनि सम्प्रदाय के मूल ग्रंथ ध्वन्यालोक की लोचन नामक व्याख्या लिखने वाले साथ ही उपभिक्षा रौव दर्शन के उद्‌गाता आचार्य अभिनव गुप्त कश्मीर की ही देन है। रस निष्पत्ति के विवेचक तथा काव्य की श्रेष्ठ परिभाषा (दोष रहित, गुणयुक्त तथा अलंकारों से यदा कदा सुशोभित शब्दार्थ ही काव्य है। प्रस्तुत करने वाले आचार्य मम्मट तथा उनकी अमरकृति काव्य प्रकाश साहित्य शास्त्र में सर्वोपरि स्थान रखती है।

प्रायः कहा जाता है कि भारत में (या संस्कृत में) इतिहास लेखन की परम्परा नहीं रही। हमारे विद्वानों द्वारा इतिहास की उपेक्षा किये जाने का भी आरोप लगाया जाता है। किन्तु कल्हण रचित राजतरंगिणी की उपस्थिति में यह आक्षेप निरर्थक हो जाता है। इस इतिहास प्रधान काव्य के रचयिता कल्हण कश्मीर के राजा हर्षदेव के प्रधानमंत्री थे। यह ग्रंथ आठ तरंगों में निबद्ध है। इससे तत्कालीन शासन, सामाजिक अवस्था, धार्मिक स्थिति आदि की वस्तुनिष्ठ जानकारी मिलती है। कल्हण के बाद के लेखकों ने इसमें वृद्धि की तथा इसे अपडेट किया। निश्चय ही कश्मीर की धरती अपनी प्राकृतिक सुषमा के कारण जहां लोंगों को आकृष्ट करती रही, वहीं विद्या का संग तथा कलात्मक अभिरुचि के लिए विख्यात वहां के कवियों एवं कलाकारों ने भी अपनी प्रतिभा तथा रचना शक्ति से हमारे, सारस्वत भंडार को समृद्धि किया है।

३/५, शंकर कोलनी, श्री गंगा नगर ।

---

मन्त्रगीत—

# वनस्पति रक्षण

**देवातिथि (देवनारायण भारद्वाज)**

नष्ट करो मत वृक्ष-वनस्पति ।
इनसे ही मानव की उन्नति ॥
काक कोकिला पक्षी अनेक ।
यहीं बसाते निज नीड़ नेक ।
नर तन को देते तरुणाई,
वन प्रान्तर तरु पल्लव सुटेक ।
सूरज सी देते प्रीति प्रगति ।
इनसे ही मानव की उन्नति ॥१॥
इनको उजाड़कर फेंको मत ।
इनका परिरक्षण रोको मत ।
निज कुल से इनको छेंको मत ।
छटती इनकी छाया से क्षति ।
इनसे ही मानव की उन्नति ॥२॥
वाज तोड़ते पक्षी गर्दन ।
नर करते वृक्षों का मर्दन ।
ये दोनों असुर विनाशी हैं,
प्रभु करते इन पर भय-वर्जन ।
सह अस्तित्व पूर्ण हो संगति ।
इनसे ही मानव की उन्नति ॥३॥

स्रोत—मा काकम्बीरमुद्वृहो वनस्पतिमशस्तीर्विहि नीनशः/व्योत सूरो अह एवाचन ग्रीवा आदधते वेः ॥

(ऋग्वेद ६.४८.१७)

'वरेण्यम्' अवन्तिका (प्रथम) रामघाट मार्ग, अलीगढ़-२०२००१ (उ. प्र.)

www.thearyasamaj.org

# वैदिक ज्ञान से जीवन आनन्दमय

–श्रीमती मृदुला अग्रवाल

परमात्मा ने सृष्टि की रचना की। मानव का निर्माण किया। मानव-कल्याण के लिए चारों वेदों की रचना की। सम्पूर्ण विश्व के इतिहास में वेद ही मानव सभ्यता एवं संस्कृति के प्राचीनतम ग्रंथ हैं। 'Vedas are the first books in the library of mankind' यह हमारे लिए गौरव की बात है कि वेदों का प्रादुर्भाव सर्वप्रथम भारत में ही हुआ। परमात्मा ने आदि सृष्टि में चार सर्वोत्कृष्ट ऋषियों के हृदय में वेदों का ज्ञान दिया। विदेशी विद्वानों एवं वैज्ञानिकों ने भी हमारे ही भारत देश से वेदों से, भगवद् गीता से, उपनिषदों से, रामायण और महाभारत से, चरक-संहिता आदि महत्वपूर्ण ग्रंथों से ज्ञान-विज्ञान को चुन-चुनकर अपने-अपने देशों को लाभान्वित किया है। साथ ही विश्व के सभी देशों को भी अनुगृहीत किया है। सुसंस्कृत मानव-जीवन हेतु, हमारे भारतीय वेदादि शास्त्र, उपनिषद, स्मृति, ब्राह्मण ग्रंथ आदि से अमृत रूपी ज्ञान को प्राप्त करने के लिए विदेशी तो यहां मंडराते रहते हैं और हम भारतीय स्वयं अपनी इस धरा के मोल को न समझकर, वेदादि सत्य शास्त्रों से विमुख होकर, आज के भौतिक चकाचौंध में डूबकर अज्ञानतावश अन्धेरे में भटकते जा रहे हैं। प्राचीन वैदिक संस्कृति, सभ्यता, धर्म, भाषा, आचार-विचार, आदर्श इत्यादि आज देश में विलुप्त होते जा रहे हैं। लोग पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति की ओर आकृष्ट होते जा रहे हैं। वहां अनैतिकता, हिंसा, स्वछंद यौनाचार आदि ने इतना विकराल रूप धारण कर लिया है कि समाज में अशान्ति एवं असंतोष की धारा बह चली है। आये दिन वहां के लोग मानसिक रोगों से ग्रस्त होकर मनोवैज्ञानिक डाक्टरों के यहां चक्कर ही काटते रहते हैं।

परन्तु हमारे यहां वर्तमान में समाज की अवस्था बहुत संगीन होती जा रही है। आजकल के सामाजिक एवं राजनैतिक ठेकेदारों की तो ऐसी अवस्था है कि प्रयोजन हो तो वेदों में से मन्त्र निकाले और भाषाण दे दिये, स्वयं की आदर्शवादिता एवं विद्वता का प्रदर्शन कर दिया। जब प्रयोजन नहीं महसूस हुआ तो पाश्चात्य देशों की सामाजिक कुरीतियों को ऐसे अपना लिया जैसे वे भारतीय संविधान का ही एक हिस्सा हों। समलैंगिकता, लिव इन रिलेशनशिप (बिना विवाह के स्त्री-पुरुष का साथ रहने का अधिकार), रजिस्टर्ड-विवाह, तलाक प्रथा—इन सबको कानून ने ही स्वीकार कर लिया। वैदिक ब्रह्मचर्य एवं संयम की शिक्षा को तो गर्त में ही धकेल दिया।

'ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत। इन्द्रोहब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभरत् ॥'—अथर्ववेद, काण्ड -११, सूक्त-५, मंत्र-१९॥

**भावार्थ-**ब्रह्मचर्य (वेदाध्ययन और इन्द्रियदमन) तप से विद्वानों ने मृत्यु को हटाकर नष्ट किया है। ब्रह्मचर्य नियम पालन से ही सूर्य ने उत्तम पदार्थों के लिए सुख अर्थात् प्रकाश को धारण किया है।'

ब्रह्मचारी वीर्यनिग्रह आदि तप करता हुआ बलवान् होकर पृथिवी पर प्रकाशमान होता है। इन्द्रियों की शक्तियां पूर्ण समय तक स्थिर रहती हैं। जीवात्मा ब्रह्मचर्य एवं तप के द्वारा ही इन्द्रियों को सुखी बना सकता है। आत्मा में अनुचित विषयों के भावों तक को नहीं उठने देना भी तो एक प्रकार का ब्रह्मचर्य

www.thearyasamaj.org

ही तो है। ब्रह्मचर्य से इन्द्रियां नष्ट होने से बच जाती हैं और आनन्दमय भी हो जाती हैं।

बचपन में हम 'संस्कार' शब्द अच्छे या बुरे संस्कार सुनते आये हैं। अच्छे संस्कार बचपन से ही गलत कार्यों में प्रवृत्त नहीं करते। बचपन में 'सत्यं वद', 'धर्मं चर', 'श्रद्धया देयं' आदि शब्दों को सुनते आये हैं—जो कि सुसंस्कारों एवं सुकर्मों में हमें प्रेरित करते हैं। अगर हम चोरी करना चाहते हैं तो हमें अपने इन कुविचारों को योग साधना तप आदि से संयम में रखना होगा। शुद्ध सात्विक प्रवृत्ति से जीवात्मा को जोड़ने का नाम संस्कार है।

धार्मिक यौनाचार तो परमात्मा की ही आज्ञा है जो कि पति-पत्नी को संतान-उत्पत्ति हेतु समागम में प्रवृष्ट करता है। समलैंगिक प्रवृत्ति से तो संतान-उत्पत्ति हो नहीं सकती जो कि अन्त में असामाजिक आचरण ही कहलाता है। यह तो पति-पत्नी का सत्य प्रेम तो है नहीं, एक तरह की वासना ही है, समाज के लिए शर्मनाक भी है। ऐसी कुवासनाओं का त्याग करके, समलैंगिक भी अपने इस दुर्लभ मनुष्य जीवन को समाज के अन्य सामान्य व्यक्तियों की तरह नियमबद्ध, सफल एवं सुन्दर बना सकते हैं। ब्रह्मचर्य से संयमी होकर एवं वैदिक शिक्षा का अनुसरण करके समलैंगिक भी अपने जीवन को सही दिशा में परिवर्तित कर सकते हैं। जीवन का वास्तविक सुख तो संयम द्वारा ही प्राप्त होता है।

वेदों के यथावत् ज्ञान, अभ्यास और इन्द्रियों के दमन से मनुष्य सांसारिक और परमार्थिक उन्नति की परा-सीमा तक पहुंच सकता है।

'सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा। सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।।'—मुण्डक० ३।१।५।।

अर्थात् सत्य, तप, ज्ञान और ब्रह्मचर्य से आत्मा की प्राप्ति होती है एवं आत्मसाक्षात्कार होता है।

वैदिक ज्ञान प्राचीन जरूर है, परन्तु मानव-जीवन के हर पहलू की व्याख्या करता है। वेद के ज्ञान को जीवन से पृथक कर देना ही समाज में दुर्दशा का कारण है। प्राचीन ऋषि, मुनि वेदज्ञान से मोह-माया त्यागकर सत्याचरण से जीवन को आनन्दमय कर पाये। हम भी उन्हीं ऋषि मुनि से वेदों का ज्ञान प्राप्त कर अपने पापों का निवारण करें एवं अपनी पशुवत् कुवासनाओं को, अपने आत्मिक दोषों का नाश कर प्रसन्न रहना सीखें।

वैदिक धर्म में एकता है, वहां कोई विभाजन नहीं है। प्रत्येक मनुष्य को वेदों को पढ़कर उसकी पावन शिक्षा को आचरण में लाने का समानाधिकार है। वेदों ने आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा हमारे अन्दर छिपी हुई शक्तियों एवं सद्गुणों को जाग्रत किया है। चित्त की शान्ति द्वारा जीवन को संतुलित बनाये रखने की विधि को गंभीर रूप से पल्लवित किया है। वैदिक ज्ञान के अनुसरण से अन्तःकरण के विकार नष्ट हो जाते हैं, जिससे स्वच्छ हृदय में प्रभु की भक्ति एवं प्रेम विराजमान होकर हमारे जीवन को शाश्वत आनन्द की ओर प्रवाहित करता है।

'सर्वजनवन्दनीय परमात्मा लोक-लोकान्तरों में वेदों की ज्ञान-गंगा द्वारा सर्वत्र ही अपने मधुर आनन्द की वृष्टि कर रहा है।'—ऋग्वेद ९।७।२

वैदिक विवाह-पद्धति नें पति-पत्नी को आपस में प्रेम, विश्वास, श्रद्धा, मर्यादा एवं कर्तव्य-पालन द्वारा समाज को एक सुस्वस्थ, नियमबद्ध संयमी जीवन प्रदान करने की शिक्षा दी है। इस पद्धति को आज के कानून ने ही तिलांजलि दे रक्खी है। रजिस्टर में वर-वधू के हस्ताक्षर करवाये और हो गये पति-पत्नी। इसी

www.thearyasamaj.org
तरह तलाक प्रथा को भी इतना सरल एवं सहज बना दिया। सगे-संबंधियों का आशीर्वाद लेते हुए, यज्ञ की अग्नि को साक्षी मानकर, वेद-मंत्रों का उच्चारण करते हुए जो वैदिक, पाणिग्रहण-संस्कार होता है, उसके प्रति आजकल के युवक-युवतियों के मन में कोई श्रद्धा है भी कि नहीं कुछ पता नहीं।

**'गृहणामि ते सौभगत्वाय हस्तं मत्या पत्या जरदष्टिर्यथासः।**
**भगो अर्यमा सविता पुनर्धिर्मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः।।'**

—ऋग्वेद, मंडल-१०, सूक्त-८५, मंत्र-३६

**'इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम्।**
**क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृ हे'** —ऋग्वेद, मंडल-१०, सूक्त-८५, मंत्र-४२

अर्थात्-वैवाहिक स्त्री-पुरुष पाणिग्रहण सौभाग्य के लिए एक-दूसरे को प्रेम -पूर्वक निभावें, कभी विभक्त न हों, पूर्ण आयु तक बेटों, नातियों के संग प्रसन्न रहते हुए गृहस्थ-आश्रम को सुखी बनावें। त्याग (तलाक) का तो निषेध है। संबंध बुढ़ापे तक का है। बीच में छोड़ा नहीं जा सकता। यह ईश्वर और विद्वानों का नियम है। परिवार में वर-वधू एक साथ रहकर एक-दूसरे को प्राणसम समझें। एक-दूसरे के प्रति, परिवार के प्रति, समाज के प्रति,देश के प्रति अपने कर्तव्यों को ईश्वर-विश्वास के साथ निभाते हुए जीवन को आनन्दमय एवं मधुमय बनावें।

प्राचीन काल में नारियों को इतना सम्मान मिलता था कि 'नारी! घर की रौनक, समाज की चांदनी, देश के मस्तक की चमकती हुई बिंदिया' ऐसे सब शब्दों का प्रयोग करके नारे लगाये जाते थे। उन्हें उतनी ही इज्जत से देखा भी जाता था। नारी को पूज्य, गृह की लक्ष्मी एवं माता के रूप में सम्मानित किया जाता था। इसी तरह पुरुष भी पूर्ण रूप से नारी का साथ निभाते हुए देश-समाज-परिवार को अच्छे आचरणों से उत्कर्ष की सीमा तक पहुंचाते थे। इन सब आदर्शवादी जीवन को तो अब धूल-धूसरित कर दिया। कहां हैं वे लोग, वह समाज व राष्ट्र के सुचरित्र नागरिक एवं सम्मानित नेता जो भारतीय वैदिक-संस्कृति को ऊँचाई तक ले जाने में सक्षम थे?

मानव ही निर्माण कर सकता है और मानव ही विनाश कर सकता है। मनुष्य क्यों नहीं वैदिक युग की संस्कृति का अनुसरण करके पति-पत्नी के रूप में संयमी ज़ीवन से, तप से, पवित्र यौनाचार से अच्छी एवं संस्कारी सन्तान देकर समाज एवं राष्ट्र को अनुगृहीत करे। यही आज के समाज की तस्वीर होनी चाहिए। भोगवादी मानसिकता से तो मनुष्य सर्वदा अतृप्त ही रहता है वरंच जो योगी है वह संसार के प्रत्येक परिवर्तन में स्वयं तो सुखी रख सकता है। इन्द्रियों पर नियंत्रण रखते हुए, कुवासनाओं एवं अन्धविश्वास में जकड़े हुए समाज को जाग्रत करना, सुधारना, बच्चों-बच्चों तक अच्छे विचारों का संदेश पहुंचाना, स्कूलों में वेद पढ़ाना, वेद शास्त्रों के शुद्ध अर्थो को समझकर उसके सिद्धान्तों को जन-जन में उपदेश करते हुए जीवन-यात्रा के विभिन्न पड़ावों को तय करना-आज आर्य-धर्म की एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती के मिशन की मांग भी है।

**'ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद्भद्रं तन्न आ सुव।।'**-यजु०, अ०३०, मं०-३।।

अर्थात् 'हे सकल जगत के उत्पत्तिकर्त्ता, हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को दूर कर दीजिए। जो कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ है, वह हम सबको दीजिए। जैसे एक शायर

www.thearyasamaj.org

ने भी कहा है—'मेरे अल्लाह हर बुराई से बचाना मुझको, नेक जो राह हो उस राह पे लाना मुझको।'

स्वामीजी का मतलब सिर्फ हमारे व्यक्तिगत जीवन से नहीं था। वे चाहते थे, हम इस मंत्र से प्रेरणा लेकर हमारे परिवार, समाज, राष्ट्र एवं सम्पूर्ण विश्व को उन्नति के शिखर पर पहुंचा सकें। सबको सन्मार्ग और आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर करें। वेद निश्चय ही ईश्वरीय ज्ञान है जो दुःख की निवृत्ति कर सुख प्रदान करता है। परमात्मा ही वेद या श्रुति का मूल स्रोत और प्रतिपादक है। वेद की पावन आज्ञाओं को आचरण में लाना, आत्म-निरीक्षण द्वारा असत् से सत् की ओर चलना, स्तुति से ईश्वर में प्रीति, उसके गुण, कर्म, स्वभाव से अपने गुण, कर्म, स्वभाव को सुधारना, प्रार्थना से निरभिमानिता, उत्साह और सहाय का मिलना, उपासना से परब्रह्म से मेल और उसका साक्षात्कार - यह सब भेद खोलती है स्वामी दयानन्दजी की पुस्तक ***'सत्यार्थ प्रकाश'*** जो कि वेदों का निचोड़ है।

'वेद की शिक्षा निराशा, निरुत्साह एवं आलस्यमय वैराग्य की नहीं है। वेद की शिक्षा उत्साही, विजयसम्पन्न एवं बली होकर प्रशंसित बनना सिखलाती है।'—ऋग्वेद, १०।८४।७।।

जिस परमेश्वर ने इस सृष्टि को रचा है, वही जगदीश्वर अपने आज्ञाकारी एवं पुरुषार्थी सेवकों का क्लेश हरण करके आनन्द देता है। परमेश्वर के सामीप्य से दुःख-दोष छूटकर मानव पवित्रात्मा हो जाता है। वेद ज्ञान का भंडार है। वेदों में मानव-जीवन के लिए आवश्यक आध्यात्मिक, इहलौकिक और व्यवहारिक ज्ञान विद्यमान हैं। वेद परमात्मा की अनुभूति एवं स्थाई आनन्द देता है। **सृष्टि के विरुद्ध न जाकर हम सब इस दुर्लभ मानव-जीवन को संयम, तप आदि से सफल, सुखमय बनावें।**

**'प्रभुञ्चन्तो भुवनस्य रेतो गातुं धत्त यजमानाय देवाः।**
**उपाकृतं शशमानं यत्स्यात् प्रियं देवानामप्येतु पाथः।।**

—अथर्ववेद, काण्ड-२, सूक्त-३४, मन्त्र -२।।

भावार्थ—विद्वान् महात्मा लोग वेद द्वारा संसार की वृद्धि और स्थिति का कारण विचार कर सबको सत्य मार्ग का उपदेश करें जिससे मनुष्य ईश्वरकृत रक्षासाधन, ज्ञान, खान, पान आदि पदार्थों का (जो सबको सब जगह सुलभ है) यथावत् ज्ञान प्राप्त कर दुःखों से मुक्त होकर आनन्द भोगें। ००

१९सी, सरत बोस रोड, कोलकाता-७०० ०२०, मोबाइल-९८३६४१०५१, फोन-२४७४८६१८


**Understanding Satyartha Prakash**
**(The Light of Truth)**

आचार्य उमाकान्त उपाध्याय द्वारा रचित यह ग्रन्थ अंग्रेजी भाषा के पाठकों के लिए सत्यार्थ प्रकाश को अच्छी तरह समझने के लिए अत्यन्त उपयोगी सहायक ग्रन्थ है । यह ग्रन्थ **गंगाप्रसाद उपाध्याय पुरस्कार** से सम्मानित है । पुस्तक का मूल्य १००) रु० है (डाक खर्च अतिरिक्त)

पुस्तक प्राप्ति स्थान :–

**आर्य समाज कलकत्ता**

**१९ विधान सरणी कोलकाता-६**

www.thearyasamaj.org

# ऋतोपासना ही देवतत्व प्राप्ति का एकमात्र सोपान है

**प्रो० ओम कुमार आर्य**, उपप्रधान

आम बोलचाल की भाषा में ऋत और सत्य दोनों को एक-दूसरे का पर्यायवाची समझा जाता है। किन्तु शास्त्रीय और दार्शनिक दृष्टि से दोनों में अन्तर है। जो ईश्वरीय नियम हैं, सृष्टि के कण-कण में अनुस्यूत जो ज्ञान, विज्ञान है,जिस शाश्वत व्यवस्था के तहत समस्त ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय होती है, यह सारे का सारा ऋत के अन्तर्गत आता है। सत्य स्थान एवं समय (देश एवं काल) सापेक्ष भी हो सकता है जबकि 'ऋत' सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक होता है। परमेश्वर प्रदत्त वेद-ज्ञान 'ऋत' कोटि में आता है, न कि सत्य कोटि में। ऋत और सत्य दोनों अलग-अलग हैं, यह अग्रलिखित उद्धरणों से स्पष्ट हो जाता है—

**क–ओं ऋतञ्च सत्यञ्च......(ब्रह्मयज्ञ के अधमर्षण मंत्र)**

**ख–सत्यं वृहद् ऋतमुग्रम्.....(अथर्व वेद का पृथ्वी सूक्त)**

**ग–ऋतं वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि'** आदि उद्धरण दर्शाते हैं कि 'ऋत' और सत्य व्यावहारिक रूपेण एक जैसे होते हुए भी दो अलग-अलग शब्द हैं, इनके अर्थों में थोड़ा बहुत भेद अवश्य है।

किन्तु एक विचित्र बात यह है कि 'ऋत' और 'सत्य' में सूक्ष्म भेद भले ही हो किन्तु 'सत्य' का विलोम 'असत्य' और 'ऋत' का विलोम 'अनृत' दोनों में कोई भेद नहीं है। अर्थात् 'सत्य के विलोम 'असत्य' के स्थान पर 'असत्य' के अर्थ में सर्वत्र 'अनृत' का प्रयोग मिलता है, यथा—

**क–सत्यमेव जयते नानृतम्। (ख)–दृष्टवा रूपे व्याकरोत् सत्यानृते प्रजापतिः (यजु० १९।७७)**

**ग–इदमहमनृतात् सत्य मुपैमि** (यजु-१।५) आदि-२।

किसी देखी,सुनी, पढ़ी हुई घटना, कथन, दृश्य आदि का ज्यों का त्यों, यथार्थ या याथातथ्य वर्णन या विवरण 'सत्य' कहा जायेगा, उसमें, कोई चाहे तो, इच्छानुसार घटत-बढ़त भी हो सकती है,. किन्तु 'ऋत' का अनुसंधान होता है, ऋत को हम पूरी तरह समझें या नहीं समझें यह' अलग बात है किन्तु 'ऋत' में हम न कुछ जोड़ सकते हैं, न घटा सकते हैं न तोड़ मरोड़ कर प्रस्तुत कर सकते हैं, हाँ सत्य के मामले में ऐसा किया जाना संभव है। अतः ऋत सत्य की तुलना में सदा, सर्वथा अपरिवर्तनीय एवं अस्पृश्य (जिसे स्पर्श करके कभी बिगाड़ा नहीं जा सकता) है। ऋत सदा एक रस रहता है ऋत की महिमा अपरम्पार है, ऋत का उपासक, ऋत को जीवन में धारण करने वाला, ऋत पथानुगामी देवत्व को प्राप्त होता है, मोक्ष के आनन्द का आस्वादन करता है।

अंग्रेजी का राइट (Right) ठीक से पढ़े तो 'ऋत' ही है। इसलिए 'ऋतपथ' ही Right path है। Truth का यदि 'T' न बोले तो 'रूत' ही बोला जायेगा जो 'ऋत' का ही उच्चारण भेद हैं। मराठी भाषा-भाषी 'ऋषि' को 'रुषि' ऋत् को 'रुत' ही बोलते हैं। और तो और हरियाणा की लोकभाषा में भी ऋतु (मौसम) का अपभ्रंश 'रुत' है। ऋत का महिमा गायन वेद की सैकड़ों-सैकड़ों ऋचाओं ने किया है और बताया है कि ऋत का मनन करने वाला, ऋत-पथ का अनुगमन करने वाला, ऋतानुसार आचरण करने

www.thearyasamaj.org

वाला दिव्य गुणों से युक्त हो जाता है, देवत्व की प्राप्ति करता है, ऋतरूप परमेश्वर को पा लेता है। अकेले ऋग्वेद में ही इस विषय की चर्चा अनेक मंत्रों में मिलती है। यह तो सभी जानते हैं कि जिससे हम या अन्य कोई मिलना चाहता है तो दोनों के स्तर में, गुणधर्म में समानता होने पर ही मिलन संभव है, अन्यथा नहीं। मिलन-विषयक कोई न कोई पात्रता तो होती ही है। ईश्वर ऋतरूप है, वह आधार है, ऋत उसका आधेय है, अतः मिलनोत्सुक को ऋत के लिए ऋत की साधना, उपासना तो करनी ही होगी तब जाकर कही ऋत की अनुकूलता प्राप्त होगी। अग्रलिखित उद्धरण इस तथ्य की पुष्टि करते हैं—

ऋतस्य धारा अनुतृन्धि पूर्वीः। ऋग् ५.१२.२ ऋत का साधक ऋत की धाराओं के अन्दर तक पहुंचकर ऋत के रहस्य को पा लेता है।

ऋतस्य धीति वृंजनानि हन्ति। —ऋग् ४.२३.८

ऋत का सतत् मनन, चिन्तन पाप कर्मों को (वर्जित कर्मों को, निषिद्ध कर्मों को) नष्ट कर देता है। यूं तो किये कर्म कभी नष्ट नहीं होते, 'गीता' क कथन है—'अवश्यमेव भोक्तातव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्' किन्तु यहां अभिप्राय यह है कि पाप के प्रति जो दुष्प्रवृत्ति है उसको ऋत की साधना विरमित कर देती है । आगे ऋग्वेद यह भी स्पष्ट करता है कि ऋत का चिन्तन, मनन मानों एक प्रकार से देवत्व = ब्रह्मत्व की ही चिन्तन मनन है।

ऋतस्य धीतिं ब्रह्मणो मनीषाम्। ऋग् १.१२.३४ अर्थात् ऋत के सान्निध्य से ही ब्रह्म का पावन सान्निध्य मिलेगा। इसलिए वेद का निर्देश है कि देवत्व-प्राप्ति (ऋत की प्राप्ति) के लिए देवों जैसी पवित्रता हमारे मन, वचन, कर्म में होनी चाहिए। ऋत परमेश्वर प्राप्ति का इच्छुक ऋत के लिए ऋत को पावन करे

ऋतमृताय पवते सुमेधाः । ऋग् १.१२.२३। क्यों कि जो दुष्टात्मा हैं, पाप-पंक में आकण्ठ डूबे हैं वे ऋत की प्राप्ति तो क्या ऋतपथ पर कदम तक नहीं रख सकते। अपवित्र कभी पवित्र को नहीं पा सकता, उसे तो पाने की कामना भी नहीं करनी चाहिए—

ऋतस्य पान्थ्यां न तरान्ति दुष्कृतः ऋग् १.७३.६

इस प्रकार हम देखते है कि वेद की ऋचायें व्यक्ति को देवत्व = ब्रह्मत्व= ऋत की प्राप्ति का बहुत ही सीधा, सरल सा सन्मार्ग बता रही हैं,. और स्मरण रहे कि सीधा = सरल ऋजु मार्ग एक ही होता है, वक्र, टेढ़े-मढ़े भूलभुलैयों के रास्ते अनेक हो सकते हैं। दो बिन्दुओं के मध्य की न्यूनतम दूरी एक सीधी, सरल रेखा ही हुआ करती है, टेढ़ी मेढ़ा रेखायें अनेक हो सकती है और वे न्यूनतम दूरी नहीं बताया करती। किन्तु विडम्बना यह है कि सीधी = सरल रेखा खींचना बड़ा टेढ़ा काम है। हमारा दुर्भाग्य है कि हम ऋजु नहीं हो सकते. आर्जव ऋजुता से आजीवन कोसों दूर रहते हैं। इसी करके सरल सहज, ऋजु ऋत्ररूप परमात्मा की अनुभूति अपने हृदय में नहीं कर पाते हैं. ऋत का उपासक अजस्त्र और अनवरत रूप से पवित्र-त्रय -ईश्वर, ज्ञान, वेदोक्त ध्यान-को धारण करता हुआ देवत्व की ओर बढ़ता रहता है।

'त्री ष पवित्रता हृद्यन्तरा दधे' ऋग् १.७३.८ की स्थिति में रहता है।

ऋतोपासना का पथ ही ऋताधार परमेश्वर की प्राप्ति का एक मात्रा वेदसमम्त पथ है, देवत्व तक पहुंचने का सोपान है। देवों के देव महादेव की कृपा का पात्र बनने का एकमात्र उपाय है। चूंकि देव भी ऋत्-पथानुगामी होते हैं, ऋतानुकूल चलते हैं—

www.thearyasamaj.org

ऋतस्य देवा अनु व्रता गुः ऋग् १.६५.२

इसलिए यदि हम भी ऋत के अनुकूल चलें तो इस ऋत्-पथ पर दोनों का (साधक और देव) एक न एक दिन, कहीं न कहीं मिलन अवश्य होगा। हम ऋत को भजते रहें अनृत का सर्वथा त्याग करें, हमें देवत्व मिलेगा ही ईश्वर के आनन्दमृत का पान करने की पात्रता हमें अवश्य मिलेगी। वेद का कथन भी है-अमृतमेवेः भजन्त विश्वे देवत्वं ऋतं सपन्तो अमृतमेचैः । ऋग् १.६८.२

संसार सागर से पार जाने हेतु, मोक्षानन्द की प्राप्ति हेतु, विकारों को नष्ट करके 'देवत्व' की प्राप्ति हेतु ऋत् पंथ ही सर्वोत्तम पथ है--

अभूदु पारमेतवे पन्था ऋतस्य साधुया ऋग् १.४६. ११

यही साधुपथ है, भद्र-पथ है, श्रेयमार्ग है. हम अवश्य विचार किया करें कि ऋत क्या है, अनृत क्या है, ऋत का वरण करें, अनृत का त्याग करें— 'कदृतं, कदनृतम्' का विचार करते हुए ऋत पथ का अनुगमन करने वाले को देवत्व की मंजिल अवश्य मिलेगी, वे परमेश्वर के आनन्दामृत का पान करने के अधिकारी अवश्य बनेंगे। वेद इसका भरोसा दिलाता है—

ओं ये ईं चिकेत गुहा भवन्तमा यः ससाद धारामृतस्य। वि ये चृतन्त्यृता सपन्नत आदिव्द्सूनि प्र ववाचास्मै। ऋ० १.६७.४

ऋत् पथ के अनुगामी पर, ऋत्धारा के अनुकूल आचरण करने वाले पर ईश्वर अनन्त धनों (वसुओं) की वृष्टि करता है और वसुओं का वसु महावसु=परमेश्वर उसे सहज ही प्राप्त हो जाता है।

वेद का मार्ग सीधा, सरल, सही मार्ग है। वह अन्य मत, पन्थ, मजहब, तथा कथित गुरुओं द्वारा बताये गये मार्ग की तरह भटकाने वाला नहीं है। अन्य सभी मार्गों पर बिचौलिये बैठे है, गुरु न होकर गुरुडमवादी गुरुघण्टाल-दलाल बैठे हैं, वे भक्ति मार्ग पर, ईश्वर प्राप्ति के मार्ग पर अपने-अपने 'टोल-टैक्स' बैरियर लगाये बैठे हैं, इनमें कोई गुरु है, कोई नामदानी संत, कोई पोरपैगम्बर, कोई ईश्वर का इकलोता प्रिय पुत्र, सभी का अपना-अपना शुल्क है, किन्तु वेद के बताये मार्ग पर न कहीं टोल-टैक्स बैरियर है, न बिचौलिया न दलाल, इधर साधक है, उधर उसका साध्य (ईश-प्राप्ति, देवत्व प्राप्ति, मोक्ष प्राप्ति) साधना से पात्रता अर्जित करो और बरोक-टोक अपने अमृत पिता की अमृतमयी गोद में जा बैठो, किसी का मुंह ताकने की न आवश्यकता है, न बाध्यता। यह तो महर्षि दयानन्द को महती कृपा हम पर हुई जो सदियों - सदियों से बन्द पड़े मुक्ति के द्वार हम सबके लिए खोल दिये, सच्चा सही वेदपथ हमें दिखा दिया वेदज्ञान = ऋत के माध्यम से वेदज्ञान के प्रकाशक परमपिता तक पहुंचने का सरलतम रास्ता हमें दिखा दिया। यदि अब भी हम ऋत को न जानकर अनृत के पाश में बंधे रहे तो और किसी का दोष न होकर हमारा ही दोष कहा जायेगा।

**वेदपथ ही ऋत पथ है, हम चलें सदा इसके अनुसार**
**देवत्व प्राप्ति का सपना इस पथ से होगा साकार**
**ऋतोपासना के द्वारा ही हम पायेंगे प्रभु का प्यार**
**ऋत ही सुख है,. ऋत ही मुक्ति ऋत है आनन्दामृत धार ।**

सम्पर्क सूत्र—१६०७/७, जवाहर नगर, पटियाला चौक, जीन्द,
हरयाणा-१२६१०२ दूरभाष : ०९४१६२९४३४७ ०१६८१-२२६१४७

www.thearyasamaj.org



# 'क्यों खण्ड-खण्ड उत्तराखण्ड ?'

-श्री देवनारायण भारद्वाज

भारतवर्ष के उत्तरी भाग में विश्व के विशालतम पर्वत हिमालय की सर्वोच्च पर्वत श्रृंखलाओं के अंचल में स्थित भूभाग को उत्तराखण्ड कहा जाता है । इसी क्षेत्र में गंगोत्री, यमुनोत्री, बद्रीनाथ एवं केदारनाथ संज्ञक प्रसिद्ध चारधाम सर्वमान्य तीर्थ के रूप में पूजित किये जाते हैं । कोई स्थान विशेष स्वयं तीर्थ नहीं होता है, क्योंकि वह नौका की भाँति किसी को दुःख सागर से पार नहीं कर सकता है—तार नहीं सकता है । हाँ, उस स्थान विशेष की हरीतिमा पूर्ण दृश्यावली, जड़ी, बूटी, खनिज व जलवायु सम्बन्धी ऊर्जावान प्रभावकारी भूमिका, और वहाँ पर पहुँचकर त्याग, तपस्या एवं साधना के द्वारा सन्त-महात्माओं में उत्पन्न वेद-विद्या के तेजोमय स्वरूप का उपदेश मानव को संसार सागर से पार उतरने की प्रेरणा प्रदान करने से हम उसे तीर्थ की गरिमा प्रदान कर देते हैं । इसीलिए यजुर्वेद (१६.६१) हमारा मार्गदर्शन करता है । यथा—

ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषंडिगणः ।
तेषाँ सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥

अर्थात् जो हमें दुःख और अज्ञान के सागर से पार करा दे, वही तीर्थ होता हैं । हमारे माता-पिता-पितरजन, आचार्य, वेद, सत्य, सत्संग, ईश्वरोपासना एवं नौका हमारे लिए तीर्थ होते हैं, सब मनुष्यों का धर्म है कि वे इन तीर्थों का आश्रय लेकर सुखदायी वेदज्ञान को ग्रहण कर उसे सम्पूर्ण विश्व में फैलायें। सामवेद (मन्त्र १४३) भी कुछ ऐसा ही उपदेश हमारे लिए करता है ।

उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनाम् । धिया विप्रा अजायत ।

अर्थात पर्वतों की गुफाओं में तथा नदियों के संगम पर पहुंचकर विप्रगण अर्थात् वे लोग जो अपनी पालना एवं पूर्णता के निमित्त विशेष रूप से सचेष्ट हैं, जाकर बुद्धि व ज्ञान को प्राप्त करते हैं । ऋग्वेद (२.७.३) के अनुसार-'विश्वा उत त्वया वयं धारा उदन्या इव । अति गाहेमहि द्विषः ॥' सज्जन भक्त की भावना यही होती है कि दुर्जन उससे दूर हो जायें तथा दुःख एवं दोष भी उसी प्रकार दूर हो जायें, जिस प्रकार जल सभी अशुद्धियों को दूर कर देता है । इसके लिए उसे प्रार्थना एवं पुरुषार्थ निरन्तर करते रहना चाहिये ।

हर वेदानुयायी अपनी दैनिक प्रार्थना-साधना 'सन्ध्या' के द्वारा धरातल से उठकर उत्तराखण्ड की पंचकोशिय यात्रा नित्य करता है । वह अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय कोशों को पार करके आनन्दमय कोश तक पहुँचता है । ये कोश क्रमशः शरीर-प्राण-हृदय-मस्तिष्क एवं ब्रह्ममूर्धा के रूप में समझे जा सकते हैं । यह विनियोग बिना स्पष्टीकरण के विचित्र लग सकता है किन्तु विज्ञान सम्मत है । धरातल से उठकर ब्रह्ममूर्धा के उत्तराखण्ड पर पहुँचकर ही मानव को आनन्द का उपस्थान प्राप्त होता है, और हमारा मन्त्र-मनन सार्थक हो उठता है ।

www.thearyasamaj.org

उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ।।

अर्थात् हम अन्धकार से ऊपर उठें, परमात्मा के आनन्दमय ज्योति स्वरूप का अनुभव करते हुए और ऊपर उठें । देवों में देव—महादेव-सकल जगत के उत्पादक सूर्यों के महासूर्य परमात्मा को प्राप्त करके उत-से उत्तर, उत्तर से उत्तम सद्‌गुण सम्पन्न श्रेष्ठ हो जायें । मानव-शरीर को प्राण ऊपर की ओर उठाये रहते हैं, शरीर में स्थित आत्मा को हृदय की भावनायें अधिक ऊर्ध्वगामी गुणमय गतिशील बनाती हैं और मानस में विद्यमान विज्ञान उन भावनाओं में छटनी करके अकल्याणकारी कंकड़ों को हटा देता है, तभी वे ब्रह्ममूर्धा के स्तर पर पहुँचकर चिन्तन की चेतना से मानव आनन्द के उत्तराखण्ड पर पहुँच जाता है । इस तेजोमय ज्ञानसूर्य-ब्रह्ममूर्ध की चिन्तना की विद्युत से जीवात्मा लोक व परलोक की सर्वोत्तम ऊँचाई पर आसीन हो जाती है । सृष्टि में उत्पन्न असंख्य योनियों को तीन प्रकार के प्राणि-समूह में रखा गया है । एक वृक्षादि हैं जिनके सिर धरती में धँसे रहते हैं, दूसरे पशु-पक्षी-कीट-पतंग आदि हैं जिनके सिर धरती के समानान्तर झुके रहते हैं, तीसरे मनुष्य ही हैं जिनके सिर ऊपर आकाश की ओर उठे रहते हैं । मनुष्य को छोड़कर सभी प्राणी आहार-आराम-आरक्षा एवं सन्तति के चार पदों पर स्वाभाविक ज्ञान से अपने सम्पूर्ण जीवन चक्र को पूरा करते रहते हैं । मनुष्य को स्वाभाविक के साथ नैमित्तिम ज्ञान का वरदान भी प्राप्त है, जिसके बल पर वह धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष के क्रमिक पदों पर चलने का पुरुषार्थ करता है । यदि वह मानवोचित आचरण को छोड़कर पशुवत व्यवहार करने लगता है, तो उसका सिर कन्धों पर रहते हुए भी धरती की ओर झुक जाता है । वह समाज को मुँह दिखाने योग्य नहीं रहता है ।

भारत (प्रकाश में रत-व्यस्त) के हर मनुष्य को जहाँ एक ओर सात्विक ज्ञान ज्योति से परिपूर्ण मस्तिष्क रूपी उत्तराखण्ड प्राप्त है, वहीं दूसरी ओर सर्वोच्च हिमालय की देवभूमि रूपी उत्तराखण्ड भी उपलब्ध है, जिसका कण-कण एवं तृण-तृण मानव मस्तिष्क के उत्तराखण्ड को जाज्वल्यमान करता है। सामवेद (मन्त्र १४३) की इसी प्रेरणा से विप्रवृन्द अपनी बुद्धि एवं ज्ञान-चेतना को प्रखर बनाते हैं । शरीर के देवलोक-मस्तिष्क रूपी उत्तराखण्ड में नई स्फूर्ति का सृजन करते हैं । जैसे मैदान में उद्देश्यपूर्ण शारीरिक श्रम अथवा व्यायाम हमारे दिमाग की रक्षा प्रणाली को सक्रिय कर देता है, वैसे ही पर्वतों की ऊँची-नीची चढ़ाई-उतराई की श्रम-साध्य यात्राओं से मस्तिष्क की कोशिकाओं का जिन्हें सीमान्त (न्यूरान) कहते हैं का नवनिर्माण होता है, जिनसे जोशीले उत्साह वृद्धि के संकेत प्रकट होते हैं, साथ ही वे अवांछित उत्तेजना को शान्त भी करते हैं । पर्वतों की प्राकृतिक छटा व दृश्यावली मानव-मेधा को सुधावत शक्ति प्रदान करती है । जो स्वयमेव मनुष्य की मेधा को संतरणशील तीर्थ का रूप प्रदान कर देती है । इसीलिए वहाँ मनुष्य शक्ति एवं शान्ति से सम्पन्न हो जाता हैं । यही संसार के संजाल से पार होने वाले तीर्थयात्री की भावना पर्यटक बन जाने पर संसार में अटका कर छोड़ देती है । पर्वतीय उतार-चढ़ाव के शारीरिक श्रम के साथ होने वाले भोग-विलास एवं दुर्व्यसन उसे क्षीण कर देते हैं । तब, स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन न रहकर निर्बल हो जाता है । जो पर्वत के इस उत्तराखण्ड को पाखण्ड से भर देता है और मस्तिष्क का उत्तराखण्ड भी खण्ड-खण्ड हो जाता है । परस्पर प्रेरक एवं पूरक ये उतराखण्ड

www.thearyasamaj.org

एक दूसरे के विनाशक हो जाते हैं। इसका संकेत उत्तराखण्ड के मुख्यमंत्री का यह कथन कि "आपदा को लेकर पूरे देश में ऐसा माहौल बन गया है कि सुरक्षित हिल-स्टेशनों पर भी पर्यटक नहीं आ रहे हैं।" उन्हें स्वत्व बढ़ाने वाले यात्रियों की नहीं राजस्व बढ़ाने वाले पर्यटकों की प्रतीक्षा है। देवभूमि की गरिमा को गिराकर जब हम इसे भोग-भूमि की भंगिमा प्रदान कर देंगे, तो हम देवताओं के आशीर्वाद की प्रतीक्षा करते रह जाते हैं, किन्तु वहाँ आ जाते हैं—दैत्यों के द्वारा प्रदत्त संताप एवं विलाप।

इन मानवीय दुष्प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए जो चेतावनी दैनिक हिन्दुस्तान टाइम्स ने सन् १९७७ में दी थी, वही आज सच हो रही है। कहा गया था कि हिमालय बीमार हो रहा है, और अगर इसी तरह वनों का नाश होता रहा तो वह दिन दूर नहीं, जब प्रकृति विनाश का ताण्डव देखेगी और हिमालय खत्म हो जायेगा। यदि हिमालय खत्म हो गया तो देश प्राकृतिक आपदाओं के तले दब जायेगा। लकड़ी और पत्थरों के भवनों को तोड़कर सीमेंट-कंकरीट का बना दिया गया है। पड़ाव व धर्मशालाओं को होटल के कमरों में बदल दिया गया है। देवार्चन, प्रकृति-दर्शन, पर्वत-पथगमन की तीर्थयात्राओं को पर्यटन में बदल दिया गया है। विशेषज्ञों की आख्याओं के अनुसार हिमालय के तीर्थधाम महानगरों की भीड़भाड़ के समान व्यस्त क्षेत्र बन गये हैं। तथाकथित विकास के साधनों से मिलने वाले उस राजस्व का क्या लाभ, जो हर वर्ष की बाढ़ व चट्टानों के स्खलन से होने वाली तबाही के पुनर्वास के लिए कम पड़ती जाये।

वयस्वी पर्यावरणविद् श्री सुन्दरलाल बहुगुणा तथा मैग्सेसै पुरस्कार विजेता पर्यावरण विज्ञानी जल पुरुष राजेन्द्र सिंह की सीख है कि चारधाम को तीर्थ ही बना रहने दें। इन्हें पर्यटन स्थल बनाये जाने के परिणाम केदार घाटी में आई भीषण आपदा जैसे ही होंगे। उत्तराखण्ड देश का गौरव है, इसके संरक्षण का दायित्व केवल प्रान्त का ही नहीं, सम्पूर्ण भारतवर्ष व केन्द्र शासन का भी है। देवभूमि में डयनामाइट के विस्फोट कर सड़कें बनायी जा रही हैं। बड़ी जल-विद्युत परियोजनाओं के लिए पहाड़ों में सुरंगे बनाई जा रही हैं। इनके मलवा को नदियों में डालकर प्रवाह को अवरुद्ध किया जा रहा है। सप्ताहों बाद भी बरसात से हुए भूस्खलन का मलवा घरों में घुसकर तथा जे.सी.बी. को खाई में पलटकर मौतों का कारण बन रहा है। उन्होंने यह भी कहा है कि इतनी भीषण त्रासदी के बाद भी हमारी सरकारें, राजनीतिक संगठन व नेतागण शिक्षा लेने को तैयार नहीं हैं।

मान्य जल पुरुष का कथन प्रत्यक्ष एक उदाहरण से परिपुष्ट होता है। उत्तराखण्ड के इस वज्राघात से बचाकर कुछ स्त्री-पुरुष देहरादून लाये गये। इनको आन्ध्र प्रदेश वापिस ले जाने के लिए दो वायुयान पहुँचे, जो भिन्न-भिन्न दो राजनैतिक दलों से सम्बन्धित थे। दोनों ही इन यात्रियों को अपने अपने विमान में ले जाने के लिए उद्यत थे। इसके लिए दोनों दलों के नेताओं में जो हाथापायी एवं लड़ाई हुई उसे दूरदर्शन पर सारे विश्व ने देखा। दोनों ही पक्ष एकतापूर्ण राष्ट्रीय प्रेम, मानव-रक्षा से प्रेरित न होकर अपनी दलगत राजनीतिक स्वार्थ कामना पूर्ति के प्रति लालायित थे। प्रदेशानुप्रदेश की सीमा रेखायें तो सुचारू शासन संचालन के लिए हैं, इससे भारतमाता की ममता का विभाजन नहीं हो जाता है।

ऐतरेय ब्राह्मण ने तो यही कहा है—"समुद्रपर्यन्तायाः पृथिवाः एक राष्ट्र"। अराष्ट्रे राजन्यः शूरऽइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम' (यजु० २२.२२) अर्थात् हमारे राष्ट्र में सब राजपुरुष महारथी

www.thearyasamaj.org

और अरिदल विनाशकारी शूरवीर होवें । लोकप्रिय शासक जब अपने नागरिकों के मस्तिष्क रूपी उत्तराखण्ड को पाखण्ड प्रहार से बचायेगा, तभी हमारी भारतभूमि का सर्वोच्च उत्तराखण्ड खण्ड-खण्ड होने से बच पायेगा । 'वरेण्यम' अवन्तिका (प्रथम), रामघाट मार्ग, अलीगढ़-२०२००१ (उ०प्र०)

# मनुर्भव

**देवातिथि (देवनारायण भारद्वाज)**

प्रभु की प्रभा पड़े दिखलाई ।
मनुआ मञ्जुल करो बुनाई ।।
ताना - बाना तगड़ा तानो ।
जग - उलझन के झगड़ा जानो ।
वेदभानु पथ का अनुगामी,
मानवता का कपड़ा मानो ।
दया धर्म की कोमलताई ।
मनुआ मञ्जुल करो बुनाई ।।१।।
शुद्धि बुद्धि कौशल छवि लाओ ।
भक्ति मुक्ति कर्त्तव्य सजाओ ।
भूमि लोक मोदावृत कर दे,
व्योम लोक तक वस्त्र बढ़ाओ ।
प्रभु - मुस्कान छटा हो छाइ ।
मनुआ मञ्जुल करो बुनाई ।।२।।
श्रवण - मनन के सुमन खिलाओ ।
चिन्मय चित चादर चमकाओ ।
दिव्य बने नर-दिव्य जने जन,
वेदादर्श हर्ष छिटकाओ ।
प्रीति - रीति हो कीर्ति - कढ़ाई ।
मनुआ मञ्जुल करो बुनाई ।।३।।

स्रोत-तन्तुं तन्वन् रजसो भानुमन्विहि ज्योतिष्मतः पथो रक्ष धिया कृतान्।

अनुल्बणं वयत जोगुवामपो मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्।। -ऋ० १०,५३,६

'वरेण्यम्' अवन्तिका (प्रथम) रामघाट मार्ग,

---

## आर्य समाज नरवा पीताम्बरपुर का २३वां वार्षिकोत्सव

आर्य समाज नरवा पीताम्बरपुर का २३वां वार्षिकोत्सव तथा वार्षिक वेद प्रचार का कार्यक्रम दि० २१-१०-१३ से२३-१०-१३ तक बड़े उत्साहमय वातावरण में सम्पन्न हुआ । जिसमें प्रातः८ बजे से ११ बजे तक वेदपारयण यज्ञ एवं उपदेश अपरान्ह ३ से ५ बजे तक विविध सम्मेलन एवं बाह्य प्रचार तथा ७ बजे से १०.३० बजे तक भजन उपदेश एवं व्याख्यान का कार्यक्रम था।

इस कार्यक्रम में आर्य जगत के प्रसिद्ध विद्वान आचार्य शिवदत्त पाण्डेय-वेद-वेदाङ्ग गुरुकुल विद्यापीठ धनपतगंज सुल्तानपुर गुरुकुल के ब्रह्मचारियों एवं आचार्य राजेन्द्र कुमार शास्त्री के साथ उपस्थित थे पूर्वान्चल के प्रसिद्ध भजनोपदेश श्री त्रियुगी नारायण पाठक, श्रीमती सीतादेवी आर्या मुरादाबाद एवं रामनारायण सैनी डाण्डा संतकुमार कलकत्ता ने कार्यक्रम में भाग लिया।

यज्ञ का संचालन आचार्य शिवदत्त पाण्डेय के निर्देशन में आचार्य राजेन्द्रकुमार शास्त्री बुलंदशहर एवं गुरुकुल के ब्रह्मचारियों ने किया झण्डोत्तलन डा० राधेश्याम मिश्र-पूर्व संस्कृत विभागाध्यक्ष चन्द्रेश्वर डिग्री कालेज आजमगढ़ ने किया एवं कार्यक्रम को सफल बनाने में श्री संतोष मिश्र (राजू) (प्रधान) श्री विनीत मिश्र (मंत्री) श्री कृष्णमोहन मिश्र, उपप्रधान, श्री रामनारायण जायसवाल (कोषाध्यक्ष) का विशेष सहयोग रहा।

यह कार्यक्रम लगभग २३ वर्षो से आर्य समाज कलकत्ता के प्रेरणा एवं इसके कर्मठ कार्यकर्ताओं के सहयोग से क्रमशः फूलपुर टांड़ा, नरवापीताम्बरपुर एवं दयालपुर टाण्डा (रामनारायण सैनी के यहां ) में क्रमशः दस दिनों तक चला था।

www.thearyasamaj.org

।।ओ३म्।।

# ''महर्षि का कलकत्ता शुभआगमन''

– श्री खुशहालचन्द्र आर्य

महाराज जैसा सं० १०२९ तदनुसार सन् १८७२ के लगभग कलकत्ते पहुँचे । इनको यहाँ बुलाने का उद्योग श्रीयुत् चन्द्रशेखर सेन बैरिस्टर ने किया था । स्वामी जी के उतारने के लिए सेन महाशय पहले देवेन्द्र नाथ ठाकुर के पास गये, परन्तु जब उन्होंने स्थान देने में संकोच प्रकट किया तो फिर उन्होंने श्रीयुत् सुरेन्द्र मोहन को कहा । सुरेन्द्र मोहन स्थान देने में कुछ हिचके थे सही, परन्तु जब, सेन महाशय स्वामी जी को रेल स्टेशन से उनके मकान पर ही ले लाए तो सुरेन्द्र मोहन ने प्रसन्नता से स्वामी जी की आवभगत की और उनको अपने प्रमोद-कानन में उतारा ।

स्वामी जी के पधारने का समाचार सारे नगर में फैल गया । अनेक जिज्ञासु जन सत्संग में जाने लगे । पण्डित हेमचन्द्र चक्रवर्ती एक बड़े पक्के ब्रह्मसमाजी थे । उन्होंने एक दिन स्वामीजी से पूछा कि आप जाति भेद स्वीकार करते हैं अथवा नहीं ? उत्तर में महाराज ने कहा कि मनुष्य जाति, पशु जाति और पक्षी जाति आदि भेद तो प्रसिद्ध ही हैं, परन्तु आदि आपका आशय चार वर्णों से है तो वर्ण जन्म भेद से नहीं हैं, वे तो गुण-कर्म के भेद से हैं । स्वामी जी ने वर्णों के कर्मों की व्याख्या करके ऐसी रीति से समझाया कि वे अतीव संतुष्ट हो गए ।

चक्रवर्ती महाशय ने पुनः पूछने पर स्वामी जी ने कहा कि ईश्वर निराकार है । उसका लक्षण सच्चिदानन्द है । उसकी उपलब्धि चिरकाल तक योगाभ्यास करने से होती है । चक्रवर्ती महाशय ने स्वामी जी से योग-साधना की विधि पूछी, इसके उत्तर में स्वामी जी ने उनको उपदेश दिया कि अभ्यासी को चाहिए कि तीन घड़ी रात रहते उठ बैठे । उस समय मुँह-हाथ धोकर पद्मासन से बैठ जावे और दत्त चित्त होकर गायत्री का ध्यान करे । स्वामीजी ने हेमचन्द्र जी को अष्टांग योग की विधि और गायत्री मन्त्र अर्थ सहित लिख दिया । आसन भी लगाकर बताया । उनके पूछने पर स्वामी जी ने अच्छी प्रकार सिद्ध कर दिखाया कि सांख्य के कर्त्ता कपिल भगवान् परम आस्तिक थे । जबकि अधिकतर लोग कपिल मुनि को नास्तिक मानते हैं ।

उन दिनों श्रीयुत् केशवचन्द्र सेन यज्ञोपवीत धारण करने वाले ब्रह्म समाजियों की निन्दा किया करते थे, इसलिए हेमचन्द्र जी ने इस विषय में स्वामी जी से प्रश्न किया । स्वामी जी ने कहा कि शुभ गुणायुक्त मनुष्य को यज्ञोपवीत धारण करना उचित है । आप भी विद्वान् है, ब्राह्मण वंशीय हैं, इसलिए यज्ञोपवीत अवश्य ही धारण कीजिए । चक्रवर्ती महाशय ने फिर जनेऊ पहन लिया और अन्य अनेक सज्जनों ने भी उनका अनुकरण करते हुए, दोबारा यज्ञोपवीत धारण कर लिए । पं० हेमचन्द्र जी स्वामी जी के अनुयायी बन गये और उनसे उपनिषद् अध्ययन करने लगे । वे स्वामी जी के साथ रहकर चिरकाल तक पढ़ते रहे । कई मास के पश्चात् फरूखाबाद में उनका पाठ समाप्त हुआ ।

www.thearyasamaj.org

जिस समय स्वामी जी कलकत्ता आये, उस समय श्री केशवचन्द्र सेन कलकत्ता नहीं थे । वे जब आये तो महाराज के मिलनार्थ प्रमोद-कानन में गये और दर्शन करके देर तक वार्त्तालाप करते रहे । महाराज ने उनका नाम आदि कुछ भी न पूछा । केशवचन्द्र सेन जी ने वर्त्तालाप में स्वामी जी से कहा ''क्या आप कभी केशवचन्द्र सेन से भी मिले हैं ? स्वामी जी ने उत्तर दिया,'' हाँ मिला हूँ । ''उन्होंने कहा'' वह तो कलकत्ते में नहीं था ।,आप उससे कब मिले थे । ''स्वामीजी ने हंसकर कहा,'' अभी मिला हूँ और आप ही केशवचन्द्र सेन है । ''सेन महाशय ने कहा,'' '' यह आपने कैसे जान लिया कि मैं ही केशवचन्द्र सेन हूँ ? ''स्वामी जी ने उत्तर दिया,'' जैसी बात आपने की है ऐसी किसी दूसरे की नहीं हो सकती । ''स्वामी जी की ऊहा शक्ति से वे अति प्रसन्न हुए और इसी समय से उनके हृदय में महाराज के प्रति प्रेम और आदर का भाव उत्पन्न हो गया ।''

एक दिन केशवचन्द्र सेन जी स्वामी जी से पूछा इस समय हमारे सामने बाइबल, कुरान और वेद, इन पुस्तकों के अधार पर तीन बड़े धर्म हैं । सभी अपने को सच्चा कहते हैं । हमें कैसे ज्ञात हो कि इनमें से वास्तव में कौन सा सच्चा है ।

स्वामी जी ने उत्तर में बाइबल और कुरान में दोष दिखाकर कहा ''पक्षपात और इतिहासादि दोषों से विवार्जित केवल वेद ही हैं । इसलिए वैदिक धर्म ही सच्चा धर्म है ।''

स्वामी जी की युक्तियाँ सुन और उनकी अपरिमित प्रतिभा का परिचय पाकर केशवचन्द्र सेन ने कहा, ''शोक है कि वेदों का अद्वितीय विद्वान् अंग्रेजी नहीं जानता, अन्यथा इंगलैंड जाते समय वह मेरा इच्छानुकूल साथी होता ।'' स्वामी जी ने भी हंस कर कहा, '''शोक है कि ब्रह्म समाज का नेता संस्कृत नहीं जानता और लोगों को उस भाषा में उपदेश देता है, जिसे वे समझते ही नहीं ।' केशवचन्द्र सेन ने अंग्रेजी में एक ग्रन्थ बनाया था, उसके आरम्भ में उन्होंने एक ऐसा श्लोक रखा था जिससे ईश्वर के हाथ, पांव आदि सिद्ध होते थे । स्वामी जी ने केशव जी कहा कि ईश्वर तो व्यापक है, उसके ऐसे वर्णन अच्छे नहीं हैं । उन्होंने स्वामी जी का कथन स्वीकार कर लिया ।

एक दिन, केशवचन्द्र जी ने स्वामी जी को कहा कि आप संस्कृत ही में बातचीत करते हैं, जो लोग संस्कृत नहीं जानते उनको पण्डित लोग कुछ और ही समझा देते हैं । इसलिए आप देश की भाषा हिन्दी में व्याख्यान देने का यत्न करें । स्वामी जी ने इनकी सम्मति को मान लिया । केशवचन्द्र जी ने स्वामी जी से यह भी निवेदन किया कि अब आप सभा आदि में जाते हैं, इसलिए वस्त्रधारण कर लें तो अच्छा है । महाराज ने इस प्रस्ताव को भी अनुमोदित किया । केशवचन्द्र सेन की इन दोनों बातों को स्वामी ने सहर्ष मान लिया, इससे स्वामी जी के सरल व निरभिमानी स्वभाव का परिचय मिलता है ।

केशवचन्द्र सेन प्रतिदिन सायं समय श्री-सत्संग में सम्मिलित होते थे । उन्होंने एक बार स्वामी जी से पुनर्जन्म और अद्वैतवाद पर प्रश्नोत्तर किये, जिनका उन्हें सन्तोष जनक उत्तर मिल गया । स्वामी जी ने एक सभ्य व्यक्ति के पूछने पर कहा कि हवन, मूर्ति-पूजा नहीं है किन्तु वायुमण्डल को शुद्ध बनाये रखने की रीति है । स्वामी जी ने एक समय यह भी कहा था कि धर्म में मत-मतान्तरों को प्रमाण मानना

www.thearyasamaj.org

उपयुक्त नहीं । प्रमाण में वेदों से लेकर महाभारत तक के ही ग्रन्थों को लेना चाहिए । स्वामी जी की कीर्ति नगर में इतनी अधिक फैल गई थी कि स्वामी जी के निवास स्थान के आगे गाड़ियों का तांता बना रहता था । सत्संग में सहस्रों मनुष्य आते थे । शत-शत मनुष्य प्रश्नोत्तर करके तृप्तिलाभ करते थे ।

स्वामी जी ने कलकत्ता में तीन मास निवास किया । इस बीच उनके अनेकों व्याख्यान हए जिनमें तीन व्याख्यान मुख्य हुए । वे इसी भाँति हैं ।

१) पहला व्याख्यान केशवचन्द्र जी ने अपने निवास पर करवाया जो संस्कृत भाषा में हुआ । परन्तु स्वामी जी की कथन शैली इतनी सरल थी कि उनका कथन सर्वसाधारण की समझ में आ गया । स्वामी जी की तर्क से, युक्तियों से, दृष्टान्तों से और प्रमाणों से सभी श्रोता जन प्रसन्न हो गये । पश्चिमी ज्ञान से पारगंत लोग स्वामी जी के वैज्ञानिक बल को जानकर आश्चर्य करने लगे । उनको यह स्वप्न में भी विश्वास नहीं था कि पूर्वीय दर्शन का पण्डित उनको सन्तुष्ट कर सकता है । व्याख्यान की समाप्ति पर महाराज की भूरि-भूरि प्रशंसा की गई और लोग एक अत्युत्तम प्रभाव लेकर घरों में गये ।

२) दूसरा व्याख्यान स्वामी जी का उस समय हुआ जब कलकत्ता ब्रह्म समाज का वार्षिकोत्सव था । ब्राह्म लोग स्वामी जी से उपदेश देने की विनती करने लगे । श्री देवेन्द्र नाथ ठाकुर ने अपना ज्येष्ठ पुत्र द्विजेन्द्र नाथ को स्वामी जी की सेवा में भेज महोत्सव में पधारने की प्रार्थना की । जिस समय स्वामी जी उत्सव मंडल में पधारे तो ब्राह्म समाज के मुख्य सभासदों ने उनका भक्ति-भाव से स्वागत किया । वहाँ स्वामी जी का एक प्रभावशाली उपदेश भी हुआ ।

३) तीसरा व्याख्यान उनका ब्रह्मान गोर के स्कूल में हुआ । यह व्याख्यान साढ़े तीन बजे आरम्भ हुआ । स्वामी जी ने पहले जगत्पिता परमात्मा की स्तुति-प्रार्थना अति गम्भीर भाव से की । तत्पश्चात् वेदों के प्रमाणों और युक्तियों से ईश्वर की निराकारता और एकत्व सिद्ध किया । जन्म से वर्ण मानने में बहुत दोष दिखाये । महाराज तीन घन्टों से अधिक समय तक भाषण किया । इस बीच ईश्वरचन्द्र विद्यासागर भी स्वामी जी के पास एक-दो बार आये ।

पत्पश्चात् स्वामी जी एक वृन्दावन व्यक्ति के साथ हुगली चले गये । वहाँ से स्वामी जी वैशाख वदी ५ सम्बत् १९३० तदनुसार सन् १८७३ को प्रस्थान करके भागलपुर पधारे और यहाँ एक मास पर्यन्त नगरवासियों को अपने उपदेशों द्वारा कृतार्थ करते रहे । तत्पश्चात् स्वामी जी पटना, छपरा होते हुए मिर्जापुर पहुँचे ।

यह लेख कलकत्ता वालों के लिए बड़ा उपयोगी है । इसी उद्देश्य से मैंने यह लेख लिखा है । कृपया इसका लाभ उठावें ।

**C/o गोविन्द राम आर्य एण्ड सन्स,**
१८०, महात्मा गान्धी रोड, (दो तल्ला), कलकत्ता-700 007
Phone 22183825 (Office) 26758903(Resi) M. 9830135794

www.thearyasamaj.org



# आर्य समाज कलकत्ता के प्रकाशन

पुस्तक विक्रेता, आर्य संस्थाओं, उपदेशकों को ४० प्रतिशत की छूट दी जाती है।

| | पुस्तक का नाम | लेखक/सम्पादक | मूल्य |
|---|---|---|---|
| १. | युग निर्माता सत्यार्थ प्रकाश-संदर्भ दर्पण (ऐतिहासिक संदर्भ में सत्यार्थ प्रकाश की यात्रा का दस्तावेज) | प्रो० उमाकान्त उपाध्याय | ७०.०० |
| २. | स्वामी दयानन्द का राजनीति दर्शन (स्वामी दयानन्द के राजनीत दर्शन का समीक्षात्मक अध्ययन) | डॉ० लाल साहेब सिंह | ५०.०० |
| ३. | भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में आर्य समाज की देन (उन्नीस उत्कृष्ट निबंधों का संग्रह) | प्रो० उमाकान्त उपाध्याय द्वारा सम्पादित | १५.०० |
| ४. | त्रैतवाद का उद्भव और विकास (त्रैतवाद का उसके उद्भव और विकास के वैशिष्ट्य को स्पष्ट करने वाला दर्शन का शोधपूर्ण ग्रंथ) | डॉ० योगेन्द्र कुमार शास्त्री | २०.०० |
| ५. | उपनिषद् रहस्य (ईश केन और प्रश्न उपनिषदों की सारगर्भित व्याख्या) | महात्मा नारायण स्वामी "सरस्वती" | २०.०० |
| ६. | श्री श्री दयानन्द चरित | श्री सत्यबन्धुदास | १०.०० |
| ७. | महर्षि दयानन्द की देन (निबन्धों का संग्रह) | आर्यसमाज कलकत्ता द्वारा प्रकाशित | ३०.०० |
| ८. | धर्मवीर पं० लेखराम | स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती | ५०.०० |
| ९. | आनन्द संग्रह (स्वामी सर्वदानन्दजी महाराज के उपदेशामृत) | वीतराग स्वामी सर्वदानन्दजी महाराज | २५.०० |
| १०. | भाई परमानन्द (बलिदानी वंश के कुलदीपक की अमर कहानी) | श्री बनारसी सिंह | १०.०० |
| ११. | धर्म का आदि स्त्रोत | पं० गंगाप्रसाद जी | ३०.०० |
| १२. | संकल्प सिद्धि (विचारों के संकल्प विकल्प का अनोखा चिन्तन) | स्वामी ज्ञानाश्रम | ३०.०० |
| १३. | ज्योतिर्मय (श्रीयुत् टी. एल. वास्वानी द्वारा लिखित (Torch Bearer) ) का हिन्दी अनुवाद | टी॰एल॰ वास्वानी | ३०.०० |
| १४. | वेद-वैभव | प्रो० उमाकान्त उपाध्याय | १५०.०० |
| १५. | कर्मकाण्ड | प्रो० उमाकान्त उपाध्याय | १०.०० |
| १६. | स्वतंत्रता संग्राम में आर्य समाज का योगदान | ले० सत्यप्रिय शास्त्री | ५०.०० |
| १७. | आर्यसमाज कलकत्ता का इतिहास | प्रो० उमाकान्त उपाध्याय | ८०.०० |
| १८. | मेरे पिता | इन्द्र विद्यावाचस्पति | ५०.०० |
| १९. | वेद और स्वामी दयानन्द | प्रो० उमाकान्त उपाध्याय | ४०.०० |
| २०. | व्यतीत के यश की धरोहर (महासम्मेलनों के संस्मरणात्मक आकलन) | प्रो० उमाकान्त उपाध्याय | ६०.०० |
| २१. | Torch Bearer | टी० एल० वास्वानी | ३५.०० |
| २२. | पं० गुरुदत्त लेखावली | मुनिवर पं० गुरुदत्तजी 'विद्यार्थी' | २५.०० |
| २३. | प्रार्थना प्रवचन | प्रो० उमाकान्त उपाध्याय | ५०.०० |
| २४. | सन्ध्यारहस्य एवं संध्या अष्टांग योग | प्रो० चमूपति एवं स्व० आत्मानन्द (एक जिल्द) | ३०.०० |
| २५. | बंगाल शास्त्रार्थ | प्रो० उमाकान्त उपाध्याय | ४०.०० |
| २६. | वेद में गोरक्षा या गोवध | प्रो० उमाकान्त उपाध्याय | ५.०० |
| २७. | वेद रहस्य | महात्मा नारायण स्वामी जी | ३५.०० |
| २८. | वेद वन्दन | प्रो० उमाकान्त उपाध्याय | १६०.०० |
| २९. | राज प्रजाधर्म प्रबोधभाष्य | प्रो० उमाकान्त उपाध्याय | ७०.०० |
| ३०. | वेद वीथिका | प्रो० उमाकान्त उपाध्याय | १६०.०० |

आर्य समाज कलकत्ता, १९ विधान सरणी कोलकाता - ६ के लिए पं० उमाकान्त उपाध्याय, एम०ए० द्वारा प्रकाशित
तथा एशोशियेटेड आर्ट प्रिण्टर्स, ७/२, विडन रो, कोलकाता-६ में मुद्रित। मो. : ९८३०३७०४६३